

\* ॐ श्रीपरमात्मने नमः \*

# कल्याण

मूल्य १० रुपये



वर्ष  
९२

गीताप्रेस, गोरखपुर

संख्या  
१०

महागौरी





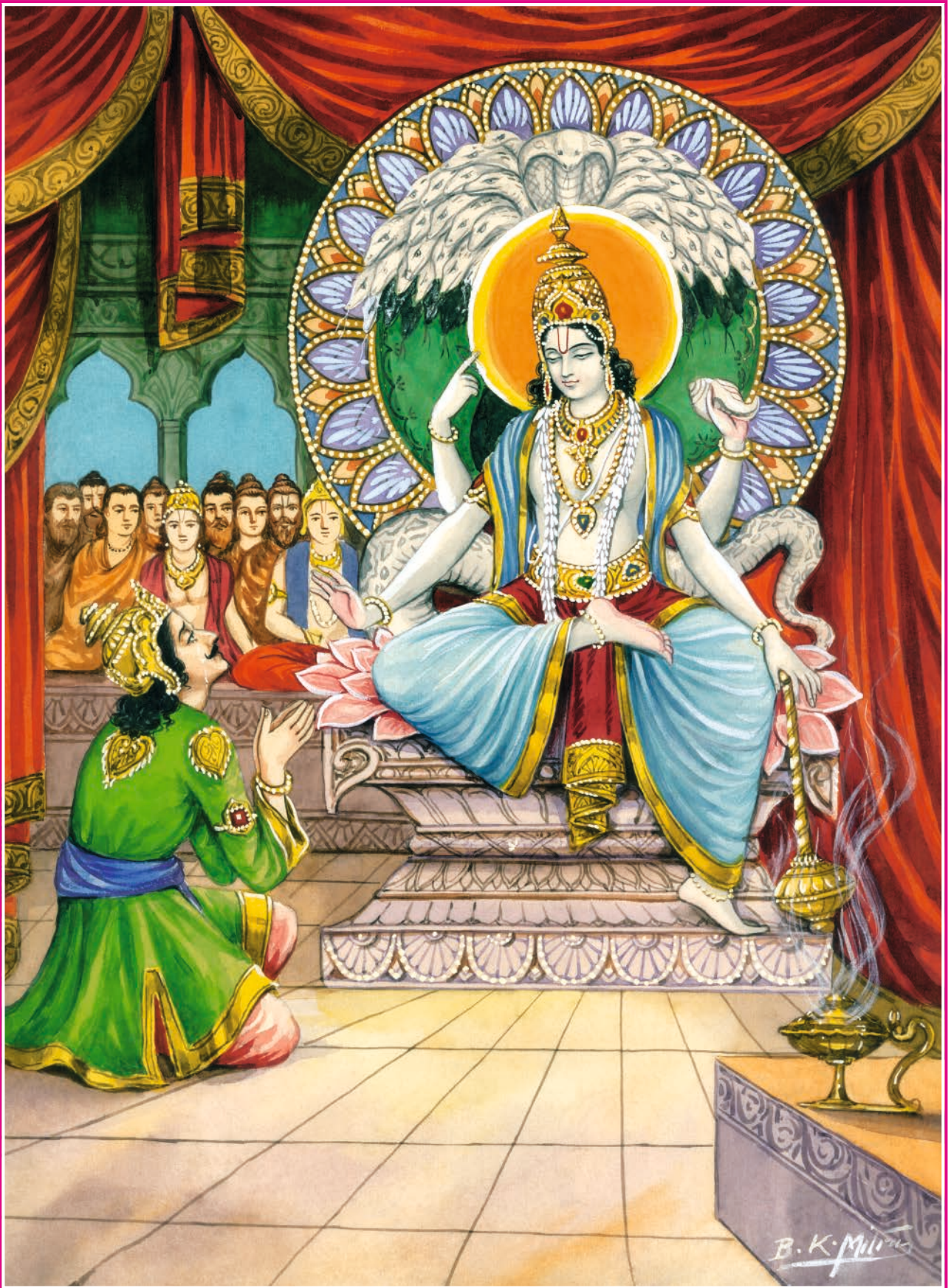
**COLLECTION OF VARIOUS**  
**-> HINDUISM SCRIPTURES**  
**-> HINDU COMICS**  
**-> AYURVEDA**  
**-> MAGZINES**

**FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)**

**Made with**  
  
**By**  
**Avinash/Shashi**

**Icreator of**  
**hinduism**  
**server!**





राजा चित्रकेतुको भगवान् शेषके दर्शन

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

वन्दे वन्दनतुष्टमानसमतिप्रेमप्रियं प्रेमदं पूर्णं पूर्णकरं प्रपूर्णनिखिलैश्वर्यैकवासं शिवम् ।  
सत्यं सत्यमयं त्रिसत्यविभवं सत्यप्रियं सत्यदं विष्णुब्रह्मानुतं स्वकीयकृपयोपात्ताकृतिं शङ्करम् ॥

वर्ष

१२

गोरखपुर, सौर कार्तिक, वि० सं० २०७५, श्रीकृष्ण-सं० ५२४४, अक्टूबर २०१८ ई०

संख्या

१०

पूर्ण संख्या ११०३

## राजा चित्रकेतुको भगवान् शेषके दर्शन

मृणालगौरं शितिवाससं स्फुरत्किरीटकेयूरकटित्रकङ्कणम् ।

प्रसन्नवक्त्रारुणलोचनं वृतं ददर्श सिद्धेश्वरमण्डलैः प्रभुम् ॥

राजा चित्रकेतुने देखा कि भगवान् शेषजी सिद्धेश्वरोंके मण्डलमें विराजमान हैं। उनका शरीर कमलनालके समान गौरवर्ण है। उसपर नीले रंगका वस्त्र पहना रहा है। सिरपर किरीट, बाँहोंमें बाजूबंद, कमरमें करधनी और कलाईमें कंगन आदि आभूषण चमक रहे हैं। नेत्र रतनारे हैं और मुखपर प्रसन्नता छा रही है।

तद्दर्शनध्वस्तसमस्तकिल्बिषः स्वच्छामलान्तःकरणोऽभ्ययान्मुनिः ।

प्रवृद्धभक्त्या प्रणयाश्रुलोचनः प्रहृष्टरोमानमदादिपूरुषम् ॥

भगवान् शेषका दर्शन करते ही राजर्षि चित्रकेतुके सारे पाप नष्ट हो गये। उनका अन्तःकरण स्वच्छ और निर्मल हो गया। हृदयमें भक्तिभावकी बाढ़ आ गयी। नेत्रोंमें प्रेमके आँसू छलक आये। शरीरका एक-एक रोम खिल उठा। उन्होंने ऐसी ही स्थितिमें आदिपुरुष भगवान् शेषको नमस्कार किया।

[ श्रीमद्भागवतमहापुराण ]



हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण २,००,०००)

कल्याण, सौर कार्तिक, वि० सं० २०७५, श्रीकृष्ण-सं० ५२४४, अक्टूबर २०१८ ई०

## विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- राजा चित्रकेतुको भगवान् शेषके दर्शन .....	३	१४- भक्तकी साधना [गद्य-काव्य] ( श्रीछैलबिहारीजी गुप्त 'छैल') ...	२२
२- कल्याण .....	५	१५- सरयू रामायणके हनुमान् ( डॉ० श्री ए० बी० साईप्रसादजी ) .....	२३
३- महागौरी [ आवरणचित्र-परिचय ] .....	६	१६- विरह ( श्रीइन्दरचन्दजी तिवारी ) .....	२६
४- श्रीराम और भरतका अनिर्वचनीय प्रेम ( ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका ) .....	७	१७- संत-वचनामृत ( वृन्दावनके गोलोकवासी संत पूज्य श्रीगणेशदास भक्तमालीजीके उपदेशपरक पत्रोंसे ) .....	२७
५- नकद धर्म ( श्रीनन्दलालजी टाँटिया ) .....	८	१८- नथ [ संत-चरित ] ( श्रीशिवचरणजी चौहान ) .....	२८
६- कैकेयीका सती होनेका प्रयास ( मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी उपाध्याय ) .....	९	१९- अन्तकालमें क्या करें ? ( श्रीरूपचन्दजी शर्मा ) .....	२९
७- 'हे देव परम महादेव प्रभू' ( श्रीशिवकुमारसिंहजी 'शिवम') .....	१०	२०- श्रीरामचरितमानसमें शक्तितत्त्वनिरूपण ( श्रीराधानन्दसिंहजी ) .....	३०
८- सबका कल्याण हो ! ( नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार ) ...	११	२१- निवेदिता [ कहानी ] ( श्रीशंकरलालजी माहेश्वरी ) .....	३२
९- प्रकृति ( श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ वीतराग स्वामी श्रीदयानन्दगिरिजी महाराज ) .....	१४	२२- संत-संस्मरण ( परमपूज्य देवाचार्य श्रीराजेन्द्रदासजी महाराजके गीताभवन, ऋषिकेशमें हुए प्रवचनसे साभार ) .....	३४
१०- शरणागतिका तत्त्व [ साधकोंके प्रति— ] ( ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज ) .....	१५	२३- व्यक्तिका कल्याण और सुन्दर समाजका निर्माण ( ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज ) .....	३५
११- परब्रह्म परमेश्वरके अवतारतत्त्वका रहस्य ( श्रीजगदीशप्रसादजी गुप्ता ) .....	१८	२४- गोषु दत्तं न नश्यति ( पं० श्रीरामस्वरूपदासजी पाण्डेय ) .....	३६
१२- बालरूप रामकी झाँकी [ कविता ] ( श्रीसनातन कुमारजी वाजपेयी ) .....	१९	२५- साधनोपयोगी पत्र .....	३८
१३- दुर्गासप्तशतीमें 'नमस्तस्यै' पदकी पुनरावृत्तिका रहस्य ( श्रीकैलाश पंकजजी श्रीवास्तव ) .....	२०	२६- ब्रतोत्सव-पर्व [ कार्तिकमासके व्रत-पर्व ] .....	४०
		२७- श्रीभगवन्नाम-जपकी शुभ सूचना .....	४१
		२८- श्रीभगवन्नाम-जपके लिये विनीत प्रार्थना .....	४४
		२९- कृपानुभूति .....	४६
		३०- पढ़ो, समझो और करो .....	४७
		३१- मनन करने योग्य .....	५०

## चित्र-सूची

१- महागौरी .....	( रंगीन ) .. आवरण-पृष्ठ	५- कैकेयीको प्रणाम करते श्रीराम .....	( इकरंगा ) .....	९
२- राजा चित्रकेतुको भगवान् शेषके दर्शन ( " ) .....	मुख-पृष्ठ	६- भगवान् विष्णुके दशावतार .....	( " ) .....	१८
३- महागौरी .....	( इकरंगा ) .....	७- देवताओंद्वारा भगवती विष्णुमायाकी स्तुति .....	( " ) .....	२०
४- श्रीरामको प्रणाम करते भरत .....	( " ) .....			

एकवर्षीय शुल्क

₹ २५०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय । सत्-चित्-आनंद भूमा जय जय ॥  
जय जय विश्वरूप हरि जय । जय हर अखिलात्मन् जय जय ॥  
जय विराट् जय जगत्पते । गौरीपति जय रमापते ॥

विदेशमें Air Mail }  
शुल्क }

वार्षिक US\$ 50 ( ₹ 3000 )  
पंचवर्षीय US\$ 250 ( ₹ 15000 )

{ Us Cheque Collection  
{ Charges 6\$ Extra

पंचवर्षीय शुल्क

₹ १२५०

संस्थापक — ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका

आदिसम्पादक — नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

सम्पादक — राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक — डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़

केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : [gitapress.org](http://gitapress.org)

e-mail : [kalyan@gitapress.org](mailto:kalyan@gitapress.org)

09235400242/244

सदस्यता-शुल्क — व्यवस्थापक — 'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस — २७३००५, गोरखपुर को भेजें ।

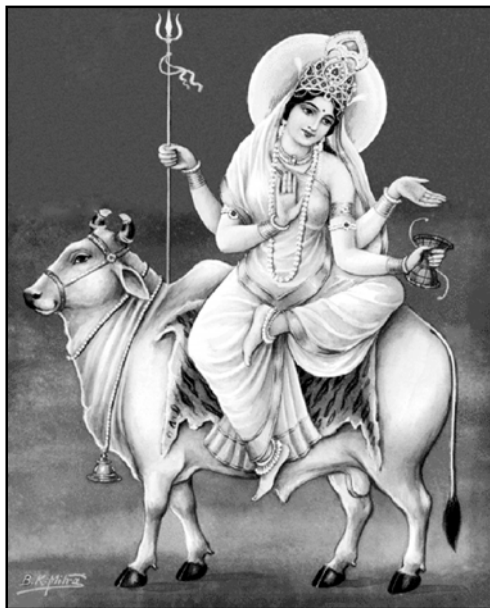
Online सदस्यता-शुल्क — भुगतानहेतु- [gitapress.org](http://gitapress.org) पर Online Magazine Subscription option को click करें ।

अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क [kalyan-gitapress.org](http://kalyan-gitapress.org) पर निःशुल्क पढ़ें ।

**याद रखो**—वे लोग बड़े ही भाग्यवान् हैं और सच्चे परमार्थसाधक हैं, जो किसीके द्वारा निन्दा सुनकर उद्विग्न नहीं होते, प्रशंसा सुनकर हर्षित नहीं होते और स्वयं न तो जिन्हें किसीमें दोष दीखता है, न जिनकी जीभ क्षणभरके लिये भी किसीकी निन्दा करनेमें प्रवृत्त होती है और न जिनके कान ही किसीकी निन्दा सुनना पसन्द करते हैं। ‘शिव’

**याद रखो**—जबतक मिथ्या अभिमानवश तुम शरीर और नामको अपना स्वरूप माने हुए हो, तभीतक तुम्हें स्तुति-निन्दा और मानापमानसे सुख-दुःख होते

# महागौरी



श्वेते वृषे समारूढा श्वेताम्बरधरा शुचिः ।

महागौरी शुभं दद्यान्महादेवप्रमोददा ॥

माँ दुर्गाजीकी आठवीं शक्तिका नाम महागौरी है—

‘महागौरीति चाष्टमम्’। इनका वर्ण पूर्णतः गौर है। इस गौरताकी उपमा शंख, चन्द्र और कुन्दके फूलसे दी गयी है इनकी आयु आठ वर्षकी मानी गयी है—‘अष्टवर्षा भवेद् गौरी’। इनके समस्त वस्त्र एवं आभूषण आदि भी श्वेत हैं। इनकी चार भुजाएँ हैं। इनका वाहन वृषभ है। इनके ऊपरके दाहिने हाथमें अभय-मुद्रा और नीचेवाले दाहिने हाथमें त्रिशूल है। ऊपरवाले बायें हाथमें डमरू और नीचेके बायें हाथमें वर-मुद्रा है। इनकी मुखमुद्रा अत्यन्त शान्त है।

अपने पार्वतीरूपमें इन्होंने भगवान् शिवको पति-  
रूपमें प्राप्त करनेके लिये बड़ी कठोर तपस्या की थी।  
इनकी प्रतिज्ञा थी कि ‘**त्रियेऽहं वरदं शम्भुं नान्यं देवं  
महेश्वरात्।**’ (नारद-पांचरात्र)। गोस्वामी तुलसीदासजीके  
अनुसार भी इन्होंने भगवान् शिवके वरणके लिये कठोर  
संकल्प लिया था—

जन्म कोटि लागि रगर हमारी।

इस कठोर तपस्याके कारण इनका शरीर एकदम काला पड़ गया। इनकी तपस्यासे प्रसन्न और सन्तुष्ट होकर जब भगवान् शिवने इनके शरीरको गंगाजीके पवित्र जलसे मलकर धोया तब वह विद्युत् प्रभाके समान अत्यन्त कान्तिमान्—गौर हो उठा। तभीसे इनका नाम महागौरी पड़ा। इन्हीं महागौरीके ही शरीरसे तीनों लोकोंकी आधारभूता और शुष्मादि दैत्योंका नाश करनेवाली भगवती महासरस्वतीका प्राकट्य हुआ था—

गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-

पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यादिनीम् ॥

दुर्गापूजाके आठवें दिन महागौरीकी उपासनाका विधान है। इनकी शक्ति अमोघ और सद्यः फलदायिनी है। इनकी उपासनासे भक्तोंके सभी कल्मष धुल जाते हैं। उसके पूर्वसंचित पाप भी विनष्ट हो जाते हैं। भविष्यमें पाप-संताप, दैन्य-दुःख उसके पास कभी नहीं आते। वह सभी प्रकारसे पवित्र और अक्षय पुण्योंका अधिकारी हो जाता है।

माँ महागौरीका ध्यान-स्मरण, पूजन-आराधन भक्तोंके लिये सर्वविध कल्याणकारी है। हमें सदैव इनका ध्यान करना चाहिये। इनकी कृपासे अलौकिक सिद्धियोंकी प्राप्ति होती है। मनको अनन्यभावसे एकनिष्ठकर मनुष्यको सदैव इनके ही पादारविन्दोंका ध्यान करना चाहिये। ये भक्तोंका कष्ट अवश्य ही दूर करती हैं। इनकी उपासनासे आर्तजनोंके असम्भव कार्य भी सम्भव हो जाते हैं। अतः इनके चरणोंकी शरण पानेके लिये हमें सर्वविध प्रयत्न करना चाहिये। पुराणोंमें इनकी महिमाका प्रचुर आख्यान किया गया है। ये मनुष्यकी वृत्तियोंको सत्की ओर प्रेरित करके असत्का विनाश करती हैं। हमें प्रपत्तिभावसे सदैव

रामायणमें सुतीक्ष्णका प्रेम बहुत ही विचित्र है। भगवान् श्रीरामसे जिस समय सुतीक्ष्णजी मिलते हैं, उस







तीनों माताओंके बीच श्रीराम जब कैकेयीजीके हृदयसे लग गये तो वे रोने लगीं। उन्हें लगा—अरे, रामपर क्रोध करके मैंने वनवास दे दिया था, पर इसका व्यवहार आज भी मेरे प्रति वैसा ही है। पहले वह अपनी माताकी अपेक्षा मुझे अधिक चाहता था, यह तो एक साधारण बात थी, लेकिन जब मैंने इसे इतना कष्ट दिया तब भी मेरे प्रति इसका पुराना भाव है। आज भी अपनी माताकी अपेक्षा मुझे अधिक महत्त्व देता है और भगवान् राम तो कैकेयी अम्बाके हृदयसे लगकर कहने लगे—माँ, तुम बिलकुल मत घबराना, मेरे हृदयकी बात तो केवल तुम्हीं जानती हो। अगर तुमने मुझे वन न भेजा होता तो भरतका चरित्र—भरतका प्रेम समाजके सामने कैसे आता? यह दिव्य औषधि कैसे प्रकट होती? इसलिये तुम दुःख न करो। और कैकेयीने अपने मनके

तीव्र लोभकी निरर्थकताको देखा। अरे, जिस भरतके लिये मैंने इतना लोभ किया, उसने मुझसे कैसा व्यवहार किया, मेरी भर्त्सना की, मेरे राज्यके प्रस्तावको अस्वीकार किया, जिसके कारण मैं विधवा हो गयी, मुझपर कितना बड़ा कलंक लगा, समाजसे तिरस्कृत हो गयी और अन्तमें उस भरतने राज्यको अस्वीकारकर त्यागका जीवन स्वीकार कर लिया। उन्हें लोभकी व्यर्थता स्पष्ट दिखायी देने लगी और भगवान् रामके हृदयसे लगनेके बाद क्रोधकी व्यर्थता स्पष्ट दिखायी देने लगी। परिणाम यह हुआ कि सन्निपात शान्त हो गया और रामराज्यकी स्थापना हुई। गोस्वामीजीने मानो बताया कि बुराइयोंके साथ हमारे अन्तर्मनमें ग्लानि उत्पन्न होना, यह रोगको विनष्ट करनेकी सबसे पहली शर्त है।

[ प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता ]

**‘हे देव परम महादेव प्रभू’**

( श्रीशिवकुमारसिंहजी 'शिवम' )

[पुराण-वाङ्मयमें श्रीशिवमहापुराणका अत्यन्त महिमामय स्थान है। शिवके उपासक इस पुराणको शैवभागवत मानते हैं। लेखकने इस पुराणका अवधी भाषामें दोहा-चौपाई-छन्दसमन्वित गेय शैलीमें 'शिवायन' नामसे पद्यानुवाद किया है। यहाँ उसमेंसे एक स्तुति दी जा रही है—संपादक ]

हे देव परम महादेव प्रभू, अभिवादन मम स्वीकार करो ।  
कैलास के बासी सदाशिव नाथ, स्वदासह अंगीकार करो ॥  
परमेश्वर पंचमुखी परखी, भरि भाव सभाव सुधार करो ।

हम दासन्ह तामस भाव हरो, भरि मन्त्र प्रभाव उद्धार करो ॥

हे देवोंमें श्रेष्ठ महादेव! आप कृपाकर मेरा अभिवादन स्वीकार करें। हे कैलासमें रहनेवाले नाथ सदाशिव! आप अपने दासोंको अपने अंग-संग रखें। हे श्रेष्ठ पारखी, पंचमुखी परमेश्वर! हममें सुन्दरतम भाव भरकर हमारे स्वभावका सुधार कर दो। हम दासोंके तामसी भावोंका निवारणकर हममें अपने मन्त्रका प्रभाव भर दो। हमारा उद्धार करो।

विषपान कियो तुम नीलसुकण्ठ, सुहेतुहिं देवन्ह के हितकारी ।  
तुम रूप अनेक सहस्र मुखी, परिव्याप्त परमअणु शक्ति खरारी ॥

शिव-शक्ति संयोगहिं सृष्टि रच्यो, असुरारि वृषभध्वज तुम त्रिपुरारी ॥

अपने भक्तोंके हितहेतु आपने विषपान कर लिया, जिसके प्रभावसे आपके कण्ठका रंग ही नीला पड़ गया। आप देवोंके हितहेतु उनके हितकारी हैं। आपके असंख्य रूप हैं। आप सहस्रों मुखोंवाले हैं। आप अणुमें ही नहीं, परमाणुमें भी परिव्याप्त हैं। अणु-परमाणुमें आपकी ही शक्ति है। बाल चन्द्रमाको आप अपने मस्तकमें धारण करते हैं तथा सुकुमारि गिरिजा (पार्वती)-को उनकी तपस्याका फल देते हुए उन्हें अपनी वामांगा शक्ति बना ली है, जिनके संयोगसे आपने इस समस्त सृष्टिकी रचना की। आप वृषभध्वज हैं तथा तीनों पुरियोंके मालिक त्रिपुरासुरके शत्रु हैं। आप असुरों (राक्षसों)-

[Hinduism in Discord Server https://discord.gg/dharma](https://discord.gg/dharma)
 MADE WITH LOVE BY Avinash/Shri



## सबका कल्याण हो!

( नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार )

हिन्दू-शास्त्रोंकी दृष्टिसे संसारके समस्त प्राणी एक भगवान्के स्वरूप हैं, भगवान्के निवासस्थान हैं या भगवान्के सनातन अंश—उनकी प्रिय संतान हैं। तीनों सिद्धान्त भिन्न-भिन्नसे प्रतीत होनेपर भी वस्तुतः एक ही सत्यका प्रतिपादन करते हैं। यदि ज्ञानकी दृष्टिसे कहा जाय तो इसी तत्त्वको यों कहा जाता है कि एक ही अखण्ड आत्मा विभिन्न स्थूल-सूक्ष्म जीवोंके रूपोंमें वैसे ही प्रकाशित है, जैसे एक ही अखण्ड महाकाश समस्त देशों, नगरों, गाँवों, मकानों और कोठरियोंके रूपमें प्रकट है। इसीलिये सर्वत्र भगवद्दर्शन अथवा सर्वत्र आत्मदर्शन करनेवाले पुरुष हिन्दू-शास्त्रकी दृष्टिसे महात्मा माने जाते हैं—

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते।

वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥

(गीता ७।१९)

‘बहुत जन्मोंके अन्तमें जो ज्ञानप्राप्त पुरुष सब वासुदेव ही हैं, इस प्रकार मुझको (भगवान्को) भजता है, वह महात्मा अति दुर्लभ है।’

भगवान्ने गीता (७।७)–में कहा है—

मत्तः परतरं नान्यत् किञ्चिदस्ति धनञ्जय।

मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव॥

‘अर्जुन! मेरे अतिरिक्त किञ्चिन्मात्र भी दूसरी वस्तु नहीं है। यह सम्पूर्ण (जगत्) सूत्रमें (सूतेकी) मणियोंकी भाँति मुझमें ही पिरोया हुआ है।’

इस प्रकार जो सर्वत्र और सर्वदा श्रीभगवान्को देखता है, उसे सर्वत्र, सबमें, सब समय भगवान् ही मिलते हैं। भगवान्ने गीता (६।३०)–में कहा है—

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।

तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति॥

‘जो सर्वत्र मुझ भगवान्को देखता है और सबको मुझ भगवान्में देखता है, उसके लिये न मैं कभी परोक्ष होता हूँ और न वह मेरे लिये परोक्ष होता है।’

इस प्रकार सर्वभूतप्राणियोंमें भगवान्को और भगवान्में सर्वभूत प्राणियोंको देखनेवाला, व्यावहारिक जगत्में

अपने वर्णाश्रमके अनुसार—स्वाँगके अनुसार अभिनय करनेवाले नटकी भाँति—जो कुछ भी व्यवहार करे, उसके सारे भाव होते हैं भगवान्में ही; क्योंकि उसके अनुभवमें एक भगवान्के अतिरिक्त और कुछ रहता ही नहीं। इसीपर गीता(६।३०)–में श्रीभगवान् कहते हैं—

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः।

सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते॥

(गीता ६।३१)

‘जो पुरुष एकत्व (एकमात्र भगवद्भाव)–में स्थित होकर सब भूत-प्राणियोंमें स्थित मुझ भगवान्को भजता है, वह योगी सब प्रकारसे व्यवहार-बर्तावमें लगा हुआ भी वस्तुतः मुझ भगवान्में ही लगा रहता है।’

ऐसा महापुरुष सर्वत्र समस्त जीवोंमें समबुद्धि होकर सबके सुख-दुःखकी अनुभूति अपने-आपकी तुलनासे करता है। भगवान् फिर कहते हैं—

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।

सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः॥

(गीता ६।३३)

‘जो पुरुष अपनी उपमासे सबमें सबके सुख अथवा दुःखको सम देखता है, वह योगी परमश्रेष्ठ माना गया है।’

मतलब यह कि अपने एक ही शरीरके सभी अवयवोंमें आत्मभाव समान होनेके कारण उनमें होनेवाले सुख-दुःखको मनुष्य समान देखता है। चोट चाहे पैरमें लगे चाहे सिरमें—दुःख मनमें समान होता है; इसी प्रकार आराम चाहे पैरको मिले चाहे मुखको—सुख भी समान ही होता है। बर्ताव-व्यवहारमें भले ही पूरा-पूरा भेद रहे और वह रहना अनिवार्य है। पैर और सिरके अथवा हाथ और मुँहके न तो काम एक-से होते हैं और न उनके साथ व्यवहार ही एक-सा हो सकता है, परंतु ‘आत्मौपम्य समता’ सबमें एक-सी है।

हिन्दू-सिद्धान्तके अनुसार इस प्रकार जानने-माननेवाला पुरुष किसीके साथ कैसे वैर कर सकता है और कैसे

अब प्रश्न यह है कि आजके वातावरणमें ऐसे भावोंकी रक्षा कैसे हो और कैसे आचरणमें इनका प्रयोग हो,

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभागभवेत् ॥



# प्रकृति

( श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ वीतराग स्वामी श्रीदयानन्दगिरिजी महाराज )

प्रकृति इस संसारकी उस शक्तिका नाम है, जो कि बिना किसी यत्नके संसारको उत्पन्न करके स्थिर रखती हुई बहती जाती है और समयपर संहार करती है अर्थात् उत्पत्ति, स्थिति और संहारकी वह शक्ति जो कि बिना किसी प्रत्यक्ष प्राणीके यत्नके अपने-आप अपने ही नियमों और अधिनियमों (Principles)-के अधीन संसारको चलाती रहती है। यद्यपि इस प्रकृतिके तल (तह)-में छिपी हुई चेतन शक्ति इसको क्रियायुक्त करती है, किन्तु इस चेतन शक्तिको ढकनेवाली यह प्रकृति शक्ति ही सब कुछ करती-कराती हुई दृष्टिगोचर होती है। इसमें सत्त्वगुण ज्ञानरूपमें और रजोगुण क्रियारूपमें तथा तमोगुण अन्धकार या जड़रूपमें जाननेमें आते हैं। चेतन तो ढका रहता है। कार्य करती हुई स्वयं यही प्रतीत होती है। इसलिये इसका नाम प्रकृति है अर्थात् प्रकर्षपूर्ण कृति, जो कि बड़े व्यवस्थित प्रकारसे, नियमोंके अधीन, अपने-आप ही होती जाती है, चलती जाती है; और काम करती जाती है। समयपर सूर्यका उदय-अस्त, ग्रहोंका उदय-अस्त और ऋतुओंका परिवर्तन—सब उसीके अनुसार शनैः-शनैः, बिना किसी यत्नके होता हुआ दीखता है, यही सब प्रकृतिका खेल है।

इसका बन्ध इतना कठोर है कि मनुष्यको इसकी लीला प्रिय प्रतीत होकर बाँधती है और उत्पन्न करती जाती है, संसारमें बसाये और बनाये रखती है, दुःख दिखाकर मारती और नष्ट करती है। इस प्रकृतिके जन्म, मरण, कर्मोंके फलभोग और सब प्रकारके दुःखों एवं बन्धनोंसे छूटनेका रास्ता केवल भगवान्का ही सहारा या शरण हो सकता है, नहीं तो यह अपने तीन गुणोंके अन्दर बँधे हुए मनुष्य या किसी भी जीवको कभी भी छूटनेकी इच्छा नहीं करने देती। प्रकृतिका अर्थ स्वभाव भी है, जैसे कि यह कहनेमें आता है कि किसी मनुष्यकी प्रकृति ऐसी है कि उस रूपमें उसके जाने-बूझे बिना ही कोई काम या कर्म बनते हैं, जो कि स्वभावरूपमें ही किये हुए कहे जाते हैं। स्व शब्दका अर्थ है 'अपना', भावका अर्थ है 'होना' अतः आपनत्वसे तथा अपने-आपसे

ही बिना किसी दूसरी प्रेरणाके हुआ कर्म इत्यादि। इसी प्रकार यह जो जगत्की मूल प्रकृति है, इसका भी यही तात्पर्य है कि किसी भी दूसरी जानी-बूझी, प्रेरणाके बिना ही स्वयं अपने भावसे ही करती-कराती, चलती-चलाती सारे जगत्में एक व्यक्तिसे लेकर अनन्त व्याक्तियोंको उत्पन्न करना, स्थित रखना और मारना या नाश करना—रूप कार्य कर रही है। प्रकर्ष अर्थात् स्वयंमें अपने-आप करनेकी प्रवृत्ति—यही स्वाभाविक बन्धन है, जोकि एक व्यक्तिमें भी सत्त्व, रज, तमरूपसे बुद्धि, अहंकार और दस इन्द्रियाँ, मन और शब्द, स्पर्श, रूप, रस-गन्ध — ये पाँच तन्मात्राएँ और इनके द्वारा पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश—इन पाँच भूतोंको उपजाती हुई चार प्रकारके जीवों (१-अण्डज, २-जरायुज, ३-स्वेदज, ४-उद्भिज)—को उत्पन्न करती है। (१) अण्डज वे हैं जो कि अण्डोंसे उत्पन्न होते हैं, (२) दूसरे जरायुसे उत्पन्न होनेवाले हैं। मनुष्य और पशु इसी श्रेणीमें आते हैं, (३) तीसरे जो स्वेदज हैं, वे पसीनेसे उत्पन्न होते हैं, जैसे कि जूँ आदि और (४) चौथे उद्भिज हैं, जो कि पृथ्वीसे उत्पन्न होनेवाले हैं, जैसे वृक्ष आदि। सभी प्रकारकी वनस्पति इसी श्रेणीमें सम्मिलित है।

इस प्रकार प्रकृति चार प्रकारकी सृष्टिको उत्पन्न करती है और फिर स्थित करके अन्तमें विनाश करती हुई सदा बहती रहती है।

जिस व्यक्तिके कर्म बिना उसके बहुत सोचे-विचारे दुःख-सुख देनेवाले बन जाते हैं, उनको भी लोग यह कह देते हैं कि इसकी तो ऐसी ही प्रकृति है। इसका ऐसा ही स्वभाव है। इस बेचारेके वशकी है ही नहीं। इस सारेका तात्पर्य है कि बिना किसीके वशके अपने-आप करने-करानेवाली शक्ति सब जगत्में प्रकृति कही जाती है। जो सब जगत्का काम चलानेवाली है, उसका नाम परा-प्रकृति है। इसको ग्रन्थोंमें अव्यक्त भी कहते हैं। जो एक व्यक्तिमें या छोटी-छोटी वस्तुओंमें है या

‘कायरतरूप दोषसे उपहत हुए स्वभाववाला तथा धर्मके विषयमें मोहितचित्त हुआ मैं आपसे पूछता हूँ कि जो साधन निश्चित कल्याणकारक हो, वह मेरे लिये कहिये; क्योंकि मैं आपका शिष्य हूँ, इसलिये आपके शरण हुए मुझको शिक्षा दीजिये।’

(सबके सामने) न कहकर एकान्तमें कहते हैं। जो भगवान्का हो जाता है, वह भगवान्को अत्यन्त प्रिय लगता है। पराये घरकी लड़की विवाहके बाद अपने पतिको अपना स्वामी समझकर—‘मैं आपकी ही हूँ’ ऐसा मान लेती है, तो वह उसके घरकी स्वामिनी बन जाती है, गृहलक्ष्मी बन जाती है। उसने अपने-आपको दे दिया तो घरका सब कुछ उसका हो गया। ऐसे ही यदि हम भगवान्के शरण हो जायँ तो भगवान्का भी सब कुछ हमारा ही हो जाय। किंतु हमारा भाव लेनेका नहीं होना चाहिये। आत्मसमर्पणमें शर्त नहीं होती।

श्रीभगवान्‌का यह स्वभाव है कि जो किसी दूसरेका सहारा नहीं लेता, केवल भगवान्‌का ही सहारा लेता है, वह उन्हें प्रिय होता है। मानसकी पंक्ति है—  
एक बानि करुनानिधान की। सो प्रिय जाकें गति न आन की॥

जब हम किसी दूसरेका सहारा लेते हैं, तब भगवान् मानो यह कहते हैं कि दूसरेका सहारा लेकर देख लो, उससे यदि तुम्हारा काम बनता हो तो बना लो। परंतु इससे अभीतक किसीका कोई काम नहीं बना। बहुतांका सहारा ले चुके, पर कोई भी टिक नहीं सका; क्योंकि वे सब-के-सब विनाशी हैं। भगवान् और हम (जीवात्मा) दोनों ही अविनाशी हैं। अनन्त सृष्टियाँ उत्पन्न होकर नष्ट हो गयीं, पर भगवान् अनादिकालसे वे ही हैं। इसी प्रकार अनन्त जन्म ले चुकनेपर भी हम (जीवात्मा) वही हैं—

भतग्रामः स एवायं भत्वा भत्वा प्रलीयते ।

(गीता ८.१९)

‘वही वह भूतसमुदाय उत्पन्न हो-होकर लीन होता है।’

(२)

मन-बुद्धि-इन्द्रियाँ, शरीर और सारा पांचभौतिक संसार प्रतिक्षण बदलता रहता है, परंतु जीवात्मा और परमात्मा कभी नहीं बदलते। संसार बदलनेवाला और नाशवान् है तथा हम न बदलनेवाले और अविनाशी हैं—ऐसी स्थितिमें संसारके साथ हमारा निर्वाह कैसे हो सकता है ? संसारके साथ अपनापन कर लेनेसे हमें दुःख

ही पाना पड़ेगा; क्योंकि उसका वियोग अवश्यम्भावी है। अतएव हमें भगवान्‌को ही अपनाना चाहिये; क्योंकि वे अपने हैं, दूसरा कोई भी अपना नहीं है। मीरा कहती हैं—

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई।

संसारमें माता, पिता, पत्नी, पुत्र, भाई, बहन आदिका जो सम्बन्ध है, वह इसी बातके लिये है कि हम उनकी सेवा करें। हमारे पास शरीर, इन्द्रियाँ, वस्तु, धन, घर, जमीन आदि जो भी सांसारिक पदार्थ हैं, उनके द्वारा हमें उन सबकी सेवा करनी है। वे सब आपकी सेवाको चाहते हैं, आपको नहीं। आपके पास संसारकी जो वस्तुएँ हैं, संसार उन्हें ही चाहता है; अतएव उन्हें संसारकी मानकर संसारके अर्पण कर दें। भगवान् हमको चाहते हैं, अतएव हमें अपने-आपको भगवान्‌के चरणोंमें अर्पित कर देना चाहिये। सांसारिक पदार्थ देकर हम भगवान्‌को प्रसन्न नहीं कर सकते। अतएव संसारकी वस्तु संसारको और भगवान्‌की वस्तु भगवान्‌को दे देनी चाहिये। इसीको शरणागति कहते हैं। सांसारिक वस्तुओंको 'अपना' मानना और संसारसे सेवा लेनेकी कामना करना भगवान्‌से विमुख होना है। इसी प्रकार सांसारिक वस्तुओंको अपना न मानना और संसारकी सेवा करना भगवान्‌के सम्मुख होना है। संसारको अपना न मानकर उसकी सेवा करनेसे संसारके लोग भी प्रसन्न हो जाते हैं, भगवान् भी प्रसन्न हो जाते हैं और हमारा कल्याण भी हो जाता है।

संसारमें सेवा करनेके लिये ही सब अपने हैं, अपना मानने और सेवा लेनेके लिये कोई भी अपना नहीं है। प्याऊपर कोई पथिक आ जाय तो उसे पानी पिला देना ही हमारा कर्तव्य है, उससे कोई काम लेना नहीं। वह अपने इच्छानुसार बैठे या चला जाय। पथिक अधिक संख्यामें आ जायँ या कम संख्यामें, पानी पिला देनेके सिवा हमारा उनसे कोई मतलब नहीं। ऐसे ही संसारमें माता, पिता, सास, ससुर, देवर, जेठ आदि जितने हमारे सम्बन्धी हैं, उनकी सांसारिक वस्तुओंद्वारा सेवा करना ही हमारा कर्तव्य है। सेवा करके उसमें अपना कोई



सांसारिक वस्तुओंको संसारके प्रति समर्पित कर दें तो संसार खुश हो जाता है और यदि उनका भगवच्चरणोंमें समर्पण कर दें तो भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं। इतना ही नहीं, भगवान् उसीके हो जाते हैं। जो भगवान्को अपना सर्वस्व दे देता है, भगवान् उसे अपना सर्वस्व दे देते हैं। ऐसा उदार भगवान्के सिवा और कोई नहीं है। गोस्वामी

## परब्रह्म परमेश्वरके अवतारतत्त्वका रहस्य

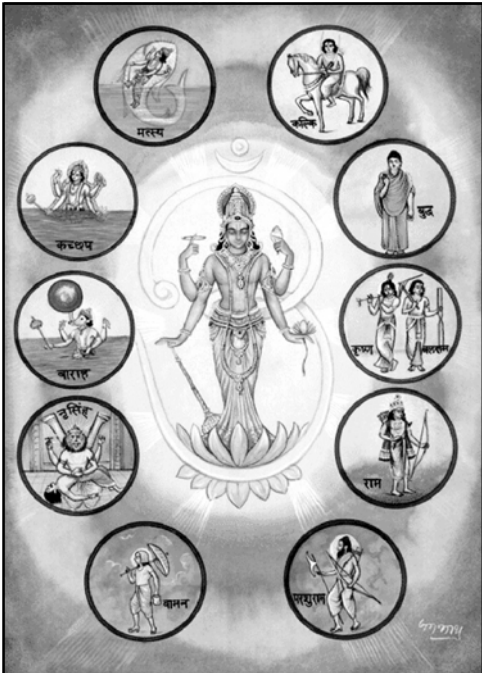
( श्रीजगदीशप्रसादजी गुप्ता )

परम कृपालु योगेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण कुरुक्षेत्रमें अपने प्रिय भक्त तथा मित्र अर्जुनको निमित्त करके सभी प्राणियोंके हितके लिये उन्हें श्रीमद्भगवद्गीताका उपदेश देते हैं। भगवान् श्रीकृष्ण कर्मयोगके उत्तम रहस्यको अर्जुनसे कहकर कहने लगे कि उन्होंने सृष्टिके आदिमें यह योग सूर्यसे कहा था। यह सुनकर अर्जुनमें यह स्वाभाविक जिज्ञासा हुई—‘आपका जन्म तो अभीका है और सूर्यका जन्म बहुत पुराना है। मैं इस बातको कैसे समझूँ?’

अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः॥

(गीता ४।४)

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर भगवान् श्रीकृष्ण अपने और उनके (अर्जुनके) बहुत जन्म होनेकी बात और उन सबको मैं ही जानता हूँ, तुम नहीं (गीता ४।५) कहकर अपने अवतार-तत्त्वके रहस्यका वर्णन करते हैं—



यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।

अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।

धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

(गीता ४।६-८)

अर्थात् मैं अजन्मा और अविनाशीस्वरूप होते हुए भी तथा समस्त प्राणियोंका ईश्वर होते हुए भी अपनी प्रकृतिको अधीन करके अपनी योगमायासे प्रकट होता हूँ। हे भारत! जब-जब धर्मकी हानि और अधर्मकी वृद्धि होती है, तब-तब ही मैं अपने रूपको रचता हूँ अर्थात् साकाररूपसे लोगोंके सम्मुख प्रकट होता हूँ। साधु-पुरुषोंका उद्धार करनेके लिये एवं पापकर्मोंके करनेवालोंका विनाश करनेके लिये और धर्मकी अच्छी तरह स्थापना करनेके लिये मैं युग-युगमें प्रकट हुआ करता हूँ।

यह शंका होती है कि भगवान् तो सर्वसमर्थ हैं, फिर सन्तोंकी रक्षा करना, दुष्टोंका विनाश करना और धर्मकी स्थापना करना—ये काम क्या वे अवतार लिये बिना नहीं कर सकते?

इसका समाधान यह है कि भगवान् अवतार लिये बिना ये काम नहीं कर सकते, ऐसी बात नहीं है। यद्यपि भगवान् अवतार लिये बिना अनायास ही यह सब कुछ कर सकते हैं और करते भी हैं, तथापि जीवोंपर विशेष कृपा करके अपने दर्शन, स्पर्श और भाषणादिके द्वारा सुगमतासे लोगोंको उद्धारका सुअवसर देनेके लिये एवं अपने प्रेमी भक्तोंको अपनी दिव्य लीलादिका आस्वादन करानेके लिये भगवान् साकाररूपसे प्रकट होते हैं। उन अवतारोंमें धारण किये हुए रूपका तथा उनके गुण, प्रभाव, नाम, माहात्म्य और दिव्य कर्मोंका श्रवण, कीर्तन और स्मरण करके लोग सहज ही संसार-समुद्रसे पार हो सकते हैं। ये काम बिना अवतारके नहीं हो सकते।

स्वामी अखण्डानन्द सरस्वतीजीने अपने गीता-

प्रवचनमें भगवान्के अवतारतत्त्वको जनसाधारणको निम्न

रूपके प्रसंगद्वारा समझाया है—

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।

Hinduism Discord Server <https://dsc.gg/dharma> | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

प्रकृति स्वामीधियाय सम्मवाय्यात्ममायया॥

एक बार अकबरने बीरबलसे पूछा—‘तुम्हारे ईश्वरके पास कोई अच्छा आदमी नहीं है क्या? जब जरूरत पड़ती है तो उन्हें स्वयं ही संसारमें आना पड़ता है। अपने किसी आदमीको क्यों नहीं भेज देते?’ बीरबल बोले कि इसका उत्तर हम आपको समयपर देंगे। उन्होंने अकबरके छोटे पुत्रकी एक मूर्ति बनवायी, उसको कपड़े पहनाये और आयाको सिखा-समझा दिया। जब सब लोग नावपर जल-क्रीडा करने गये तब आयाने सिखानेके अनुसार बनावटी बच्चेको पानीमें इस प्रकार गिरा दिया, जैसे वह गफलतसे उसके हाथसे छूट गया हो। नदीमें गिरते ही अकबरने आव देखा न ताव, न किसीको कहा, स्वयं पकड़नेके लिये कूद पड़े। जब लाये तो वह मोमका पुतला था, पुत्र नहीं। अब तो अकबर बहुत नाराज हुए कि यह क्या बदतमीजी है? बीरबलने विनयपूर्वक कहा—हुजूर, यह आपके प्रश्नका उत्तर है। यहीं हम सब आपके कर्मचारी आपकी आज्ञापर कूद पड़नेवाले, मर जानेवाले थे, लेकिन आपने हम लोगोंमें-से किसीको भी हुक्म नहीं दिया और बच्चेको बचाने स्वयं कूद पड़े। हमारे ईश्वर भी ऐसे ही सहृदय हैं, जब वे देखते हैं कि कहीं उनकी आवश्यकता है, तब वे अपने किसी आदमीको न भेजकर स्वयं आते हैं, अवतरित होते हैं।

परमब्रह्मनिष्ठ सन्त श्रीउड़ियाबाबाजी महाराजने अपने उपदेशमें इसी प्रकारका एक प्रसंग सुनाया कि श्रीमन्महाप्रभु श्रीगौरांगदेवजी महाराजसे उनके किसी शिष्यने पूछा कि महाराज! परमात्मा निराकारसे साकार कैसे हो गये? यह सुनकर श्रीमहाराजजी रोने लगे और कहा कि इस धर्मप्राण भारत-भूमिपर ऐसा कौन है, जो ऐसा बेतुका प्रश्न करता है? अरे, जब परमात्मामें सारी शक्तियाँ हैं, तब क्या वे निराकारसे साकार नहीं हो सकते? यदि भक्त विपत्तिमें हैं तो क्या भगवान् साकार होकर उसकी रक्षा करनेको नहीं आ सकते? भगवान् या तो धर्मकी पुनः स्थापनाके लिये या धर्मपर आघात करनेवालोंके मूलोच्छेदके लिये अवतार लेते हैं अथवा भक्तकी भक्तिसे अभिभूत होकर दर्शन देकर उसका कल्याण करनेके लिये अवतरित होते हैं।

भगवदवतार-रहस्यको पूज्यपाद गोस्वामी श्रीतुलसी-दासजीने अपने मानसमें इस प्रकार स्पष्ट किया है—  
जब जब होइ धरम कै हानी । बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी ॥  
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी । सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी ॥  
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा । हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा ॥  
बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार ।  
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार ॥

(रा०च०मा० १।१२१।६—८, १।१९२)

## बालरूप रामकी झाँकी

( श्रीसनातन कुमारजी वाजपेयी ‘सनातन’ )

रूप लखि आज बिकी बिनु मोल ।					
नीरद	नील	सरोज	नील	मणि,	कबहुँ लोट महि लिपट धूरि तन,
तन	द्युति	अमल	अमोल ।		पुनि ह्वै जात अबोल ।
पीत	झंग्गा	घुँघरारी	लटकनि,		कबहुँ काग लखि दौरि परत हरि,
कोमल	कलित	कपोल ॥ रूप० ॥			केलि करत अनमोल ॥ रूप० ॥
रतनारे	नैननि	की	निरखनि,		राम राम कहि टेरै जननी,
अधर	अमिय	रस	घोल ।		भाजत सुनत न बोल ।
पावन	पद	पैजनियाँ	रुन—झुन,		मुदित मातु उठि धाय उठावति,
कानन	कुंडल	लोल ॥ रूप० ॥			वारत प्रान अतोल ॥ रूप० ॥
घुटुरन	के बल	चलत	अजिर महँ,		लखि छवि सजनी भई बावरी,
मधुर	तोतरे	बोल ।			निकसत तनिक न बोल ।
उठत	गिरत	किलकत	हँसि कबहुँक,		बिसर गयी सुधि देह ‘सनातन’,
इत	उत	करत	किलोल ॥ रूप० ॥		आज बिकी बिनु मोल ॥ रूप० ॥

# दुर्गासप्तशतीमें 'नमस्तस्यै' पदकी पुनरावृत्तिका रहस्य

( श्रीकैलाश पंकजजी श्रीवास्तव )



श्रीदुर्गासप्तशतीके उत्तरचरित्रमें देवताओंद्वारा भगवती विष्णुमायाकी अत्यन्त सुन्दर स्तुति की गयी है। 'नमो देव्यै .....' से प्रारम्भ इस स्तुतिमें आगे प्रत्येक छन्दमें देवीके विभिन्न भाव-रूपों यथा—चेतना, बुद्धि, निद्रा, क्षुधा, स्मृति, भ्रान्ति, श्रद्धा, लज्जा, शक्ति आदिकी स्तुति की गयी है। प्रत्येक छन्दके अन्तमें 'नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः' शब्दोंसे देवीको प्रणाम किया गया है। इस स्तुतिका तन्मयतापूर्वक पाठ करनेसे एक विशिष्ट सुखद अनुभूति होती है। प्रत्येक बार इस बारम्बार प्रणामसे भक्त साधकके अन्तरमें एक विशेष भावका संचार होता है, जिसे शब्दोंमें व्यक्त करना सम्भव नहीं है। इस स्तुतिका पाठ स्वतन्त्ररूपसे (तन्त्रोक्त देवीसूक्तके रूपमें) भी प्रचलित है। इसकी काव्य-रचना ही अपने-आपमें इतनी सौन्दर्य एवं सौष्ठवपूर्ण है कि यदि कोई इसका पाठ आध्यात्मिक या भक्तिभाव समझे बिना भी करे तो उसे एक अनुपम आनन्दकी अनुभूति होती है। वैसे यह बात सम्पूर्ण सप्तशतीके सम्बन्धमें ही सत्य है, किंतु तत्त्वदर्शी ऋषियोंने इन मन्त्रोंमें आये 'नमस्तस्यै' आदिके तात्पर्यको यथार्थ रूपसे समझा तथा अनुभव किया है। अपितु यह कहना अधिक ठीक

होगा कि जगदम्बाने ही अपनी प्रिय संतानोंके लिये स्वयं ये रहस्य खोल दिये हैं। उन मन्त्रोंके द्रष्टाओंने कृपापूर्वक इन तत्त्वोंको अपनी दिव्य वाणीद्वारा प्रकट करके सर्वसाधारणके लिये सुलभ कर दिया है।

'श्रीदुर्गासप्तशती' की आध्यात्मिक व्याख्या 'साधन समर' के नामसे (बंगला भाषामें) भक्तोंतक पहुँचानेवाले ब्रह्मर्षि सत्यदेव भी ऐसे ही एक साधक पुरुष हुए हैं।

उक्त स्तुतिमें आनेवाले बारम्बार प्रणामके सम्बन्धमें 'साधन समर' में जो विचार व्यक्त किये गये हैं, वे अत्यन्त सारगर्भित एवं आध्यात्मिक महत्त्वके हैं।

ब्रह्मर्षि सत्यदेव बताते हैं—'इस स्तुतिके मन्त्रोंमें तीन बार 'नमस्तस्यै' शब्दका प्रयोग हुआ है। इसके अतिरिक्त एक पद 'नमो नमः' भी प्रयुक्त हुआ है। प्रथम 'नमस्तस्यै' पदद्वारा स्थूल प्रणाम अभिव्यक्त हुआ, अर्थात् माँके आधिभौतिक स्थूल रूपका अवलम्बन करके ही प्रथम प्रणाम विहित हुआ है। वस्तुतः इस स्थूलपर प्रणामरूपी कार्य भी कायिक एवं वाचनिक दोनों ही प्रकारसे स्थूलरूपमें ही अभिव्यक्त होता है। इसके पश्चात् आता है द्वितीय 'नमस्तस्यै' यह माँके सूक्ष्म स्वरूपको लक्ष्य करके उक्त हुआ है। जो सूक्ष्म चैतन्य शक्ति स्थूलरूपमें आकर विशिष्ट नाम एवं आकार ग्रहण करके अभिव्यक्त होती है, उसीको लक्ष्य करके—उसीकी उपलब्धि करके जो प्रणाम किया जाता है, वह ही प्रणामकी द्वितीय या सूक्ष्म अवस्था है। इसको मानसिक प्रणाम कहा जाता है। इसके उपरान्त तृतीय 'नमस्तस्यै' है, यह कारण स्वरूपको प्रणाम है। जिस आदि कारणसे सूक्ष्म एवं स्थूल दोनों ही अभिव्यक्त होते हैं। हमारी माँ, जगदम्बाके उसी कारण स्वरूपको लक्ष्य करके, उपलब्धि करके, जो प्रणाम किया जाता है, वह ही तृतीय प्रणाम है। यह प्रणाम कारण-शरीरमें ही अभिव्यक्त होता है। यद्यपि कारण-स्वरूप बुद्धितत्त्वके भी ऊपर अवस्थित है, फिर भी यह

प्रणाम उस विज्ञानातीत कारणको लक्ष्य करके बुद्धितत्त्वमें ही अभिव्यक्त होता है। इसीलिये इसको बौद्धिक प्रणाम कहा जाता है।

**‘नमो नमः’** यह चतुर्थ प्रणाम है। यह स्थूल, सूक्ष्म और कारणसे अतीत अर्थात् इनके परे, विशुद्ध बोधमय क्षेत्रमें या परम प्रियतम परमात्मामें ही प्रकट होता है। यद्यपि यहाँपर अर्थात् इस स्तरपर प्रणम्य, प्रणाम एवं प्रणामकर्ता कही जानेवाली तीन अलग-अलग अभिव्यक्तियाँ रही हैं, फिर भी जो प्रारम्भसे ही शरणागतभावके साधक हैं, वे इस अद्वैतक्षेत्रमें उपस्थित होते समय भी **‘नमो नमः’** कहकर केवल अपने शरणागतभावकी सहायतासे परम प्रेमास्पद परमानन्दस्वरूप परमात्मामें आत्मविस्मृत हो जाते हैं, अर्थात् अपने आपको खो देते हैं, अपने पार्थक्यको समाप्तकर उस परममें ही मिल जाते हैं। यह ही तुरीय अवस्था या चतुर्थ प्रणाम है।

इस प्रकार स्थूल, सूक्ष्म, कारण तथा कारणातीत अर्थात् तुरीय—इन चार अवस्थाओंके प्रति विशेष भावसे लक्ष्य करके जो प्रणाम करनेमें समर्थ हैं, वे ही यथार्थ देवता हैं। शुम्भ-निशुम्भ असुरोंकी जोड़ीके अत्याचारसे उत्पीड़ित देवताओंद्वारा इस प्रकारसे प्रणाम किये जा सकनेसे ही, हमारी माँ जगदम्बाने अविलम्ब स्वयं रणक्षेत्रमें अवतीर्ण हो असुरकुलका ध्वंस करके देवताओंको निःशंक किया था। हे साधको! तुम भी इस प्रकारका अभ्यास करो। स्थूल, सूक्ष्म, कारण एवं कारणातीत स्वरूपकी ओर लक्ष्य करके प्रणाम करनेके अभ्यस्त होओ। साधन शक्ति इस लक्ष्यसे परिचालित करो, तुम भी देवताओंके समान सब प्रकारके आसुरी अत्याचारसे मुक्ति पाओगे।

पुराणादि शास्त्रोंमें मुक्तिके चार स्तर बताये गये हैं। यथा—सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य एवं सायुज्य। जड़त्वको भेदकर चेतनालोकमें पहुँचना ही सालोक्य है; जिस समष्टि चैतन्यमें वह स्थित है, उसके समीपस्थ होना ही सामीप्य है। जिस सूक्ष्म कारण स्वरूप केन्द्रसे वह प्रकाशित है, वहाँ उपनीत होने अर्थात् पहुँचनेका नाम सारूप्य है, यहाँ उपस्थित होनेसे ही

साधक तत्स्वरूप हो जाता है, इसी कारण इस अवस्थाको सारूप्य कहते हैं; यहाँ भी विशिष्टता रहती है। इसके पश्चात् सायुज्य है; इस अवस्थामें कोई भी विशिष्टता (भेद या पार्थक्य) नहीं रहता, जीव निर्विशेष चैतन्य स्वरूपमें उपनीत हो जाता है। पहुँच जाता है; इसका ही अन्य नाम निर्वाण है। हे साधको! तुम्हारी दैनिक साधनामें ही जैसे इन चारों अवस्थाओंके प्रति लक्ष्य अन्तर्निहित रहता है। यहाँ चार प्रणामोंके माध्यमसे इन चार स्वरूपों या अवस्थाओंकी ओर विशेषतः लक्ष्य रखनेके लिये ही संकेत किया है। जो साधक सम्पूर्ण चारों अवस्थाओंके प्रति लक्ष्य रखनेमें समर्थ न हो, वे अन्ततः इनमेंसे दो या तीनके प्रति भी विशेष लक्ष्य रखनेकी चेष्टा करें तो वह ही यथार्थ साधना होगी। प्रतिदिन ही अल्पाधिक मुक्तिकी अनुभूति करनी होगी, उसका आस्वाद प्राप्त करना होगा।

ऐसा करनेसे ही जीवन्मुक्तिका आस्वाद प्राप्त होगा, उसकी उपलब्धि होगी।

इस स्तुतिमें जहाँ-जहाँ **‘नमस्तस्यै’** वाला अंश है, सभी स्थलोंपर उसका तात्पर्य उपरोक्त प्रकारसे ही समझना चाहिये। व्याख्याकारने इन प्रणामोंके सम्बन्धमें यह भी स्पष्ट किया है कि यद्यपि सप्तशती मन्त्र विभागमें इस मन्त्रका शेषांश अर्थात् **‘नमस्तस्यै नमो नमः’** यह अंश एक पृथक् मन्त्रके रूपमें निर्दिष्ट हुआ है, फिर भी अन्तके **‘नमो नमः’** अंशको तृतीय **‘नमस्तस्यै’** से पृथक् करके चतुर्थ प्रणामरूपसे व्यक्त करनेसे कोई हानि नहीं है। तृतीय प्रणाम कारणभावको लक्ष्य करके विहित हुआ है। किसी साधकके कारण-स्वरूपमें उपनीत हो सकनेसे, उसके लिये कारणातीत क्षेत्रमें भी प्रवेश करना अनायास साध्य हो जाता है; इसलिये कारण स्वरूपको प्रणाम करते-करते ही **‘नमो नमः’** कहकर कारणातीत क्षेत्रमें उपनीत होनेकी बात कही गयी है।

स्तुतिमें आये प्रणामोंके इस रहस्यको हृदयंगम करनेके उपरान्त इस स्तुतिका पाठ निश्चय ही अधिक गहन अनुभूतियोंकी उपलब्धि करायेंगा।



**गद्य-काव्य—**

## भक्तकी साधना

( श्रीछैलबिहारीजी गुप्त 'छैल' )

रूठे ही रहोगे क्या, देव !  
सुना दो न फिर वही अपनी बंसीकी रसमयी तान ।  
भक्तजन उस रसमयी तानकी मधुरता समझेंगे और  
समझकर उसीमें अन्ततक लवलीन हो जायँगे ।

नास्तिकजन लेकिन उसे पागलका प्रलाप अथवा मेसमेरिज्म समझेंगे।

वैज्ञानिक महापुरुष उसे विज्ञानद्वारा किसी राग-विशेषकी प्रतिध्वनिके रूपमें प्रमाणित करनेकी असफल चेष्टा करेंगे।

समय-पर-समय बीतता गया, मैं तुम्हें मनाता ही रहा; किंतु तम न पसीजे, देव!

तुम्हारी पुण्य-स्मृतिकी प्रकाश-रेखाके सहारे-सहारे मैं कितने समयसे भटकता फिर रहा हूँ, यह अतीतके गर्भसे पछे कोई।

समय-पर-समय बीतता गया, मैं तुम्हें मानता ही रहा, किंतु तम न पसीजे, देव!

लेकिन अब तुम्हीं बताओ न कि तुम्हें कैसे मनाया जाय ? अज्ञानी तो हूँ, फिर इतनी बुद्धि आये भी कहाँसे कि तुम्हें पिघला दूँ।

यह भी तो नहीं जानता कि मेरे दीनदयालु अपने इस मर्खाधिराज भक्तपर रीझेंगे भी क्योंकर?

लेकिन भूलना नहीं, प्रभो...मैं भी ध्रुवकी तरह अटल हूँ...और अन्ततक रहूँगा, जबतक मेरे नटवरनागर अपने भक्तपर पूर्णरूपसे अपनी कृपादृष्टि न करेंगे। आपने ही तो कहा है—‘मैं भक्ताधीन हूँ।’

हुँ:!! भक्ताधीन—क्या यह वास्तवमें आपने कहा है  
अथवा वेदादिमें मनगढंत ही है?

कैसे विश्वास हो मुझे, देव ! मैं तो इसे ही अत्यधिक समझूँगा ।

जब मेरे नटवर-नागर अपने पवित्र दर्शनोंका लाभ सहजमें ही करा दें, यही मेरी निधि होगी।

हृदयके अंचलमें अपना यह सुख बटोरे अन्ततक मैं  
आपकी पनीत साधनामें लीन हो जाऊँगा।

यही तो मेरी साधना है, मेरे देव !  
इसी साधनाको लेकर मैं अपने दीनदयालके दरबारतक

आज चाहता हूँ  
Hinduism Discord Server <https://dsc.gg/d>

क्या मेरी इतनी-सी भी विनती न सुनी जायगी?  
संसारकी किसी भी वस्तुकी—अर्थ, धर्म, काम,  
यहाँतक कि निर्वाणगतिकी भी कामना नहीं है, प्रभो!  
मुझे चाहिये केवल आपकी निर्मल भक्ति, मेरे ईश्वर!  
मैं याचक हूँ, मेरे धनकुबेर! आपके लिये तो कुछ  
भी अदेय नहीं है।

फिर क्या इतनी तनिक-सी भी भिक्षा नहीं मिलेगी ?  
इसी भक्ति-प्रेमको साथ लिये हुए मैं अपनी इस  
नश्वर देहको त्यागकर शिवलोकको जाना चाहता हूँ, जहाँ  
पहुँचकर भी मेरी आत्मा आपमें ही लीन रहे ।

वेद, महाभारत तथा गीता आदिका सूक्ष्मरूपसे अध्ययन किया।

फल यह निकाला कि आपने अपने अनेकों भक्तोंको अनेक रूपोंमें अवतार लेकर तारा तथा गीताका पवित्र उपदेश देकर तो आपने संसारको वास्तविक मार्ग दिखला दिया।

अबोध बालक ध्रुवको आपने प्रसन्न होकर भक्तिदान दिया।  
मुझे भी यही दान दे दीजिये न, प्रभो; मुझे भी तो  
केवल इसी वस्तुकी चाह है।

शीघ्र आओ, मेरे देव ! और आकर तनिक मेरी दशापर तो दृष्टिपात करनेका कष्ट उठाओ ।

सांसारिक बन्धनोंमें पड़कर मैं कितना विषयासक्त,  
अधम तथा नीच हो गया हूँ!

आओ, भगवन् ! आओ !! आकर शीघ्र तारो न मुझे !!!  
इसमें आपकी भी तो निन्दा होती है, देव ! जब संसार मुझे  
देखकर मेरा हास्य करता है । कोई कहता है—“बगुला-भक्त  
है,” मेढक और मल्हार गाये, “बिल्ली चली हज्जको,” इत्यादि ।

लोग अनेकों फबतियोंसे मुझे विभूषित करते हैं।  
 सोचो न कि मुझे उस समय कितना दुःख न होता होगा।

लेकिन मैं इसे एक क्षण भी माननेको प्रस्तुत नहीं हूँ कि मैं तो तुम्हारी पुनीत साधनामें अनेकानेक कष्ट सहता रहूँ और तुम यहाँ क्षीरसागरमें शान्तिपूर्वक बैठे रहो । तो तुम्हीं बताओ न कि फिर किस प्रकार तुम्हारी भक्ति की जा सकती है ?

तो क्यों न शीघ्र आकर मेरा इन संसारवालोंसे पीछा छुड़ा दो।

आपका छूटेगा पिण्ड और मेरा होगा उद्धार।  
'बोलो नन्दर मिथारीकी जय'

# सरयू रामायणके हनुमान्

( डॉ० श्री ए० बी० साईप्रसादजी )

आदिकवि वाल्मीकि जिस प्रकार अपनी रामायणको ‘सीतायाश्चरितं महत्’ कहकर सीताके प्रति अपनी श्रद्धा एवं भक्तिको प्रकट करते हैं, वैसे ही बंगलूरु विश्वविद्यालयके हिन्दी विभागके पूर्व अध्यक्ष स्वर्गीय डॉ० सरगु कृष्णमूर्तिजी अपने सरयू रामायणके द्वारा ‘हनुमच्चरितम्’ का गान करते हैं। अपने सरयू रामायणके आरम्भ (भाग १)–में इस बातकी वे पुष्टि इस प्रकार करते हैं—

श्री राम कथा है महोद्यान । माली मालिक हैं हनूमान ॥  
मन! चलो अभी वन में चन लो । पुण्य के फल सौरभ धन लो ॥

लोकनायक रामके अत्यन्त प्रिय दूत हनुमान्जीद्वारा राम-कथाका गायन सुनकर हनुमान्के परम भक्त डॉ० सरगु कृष्णमूर्ति उसीका पुनर्गायन अपने सरयू रामायणमें करते हैं। अपने बत्तीस खण्डोंवाले रामायणके नामकरणके बारेमें वे लिखते हैं—रामचन्द्रकी जन्मभूमिको अमृत प्रदान करनेवाली सरिता (सरयू)–के नामपर इस कृतिका नामकरण हुआ है।

प्रायः सभी रामायणोंमें कथा रामके आसपास ही मँडराती है, मात्र मैथिलीशरण गुप्तजीके ‘साकेत’ में कथा ‘उर्मिलायाश्चरितम्’ होनेके कारण साकेतमें बहुत हदतक उठर जाती है। सरयू रामायणमें हर कहीं हनुमान् पहले पहुँचते हैं और राम बादमें। कारण कन्नड़ दास-साहित्यके सर्वश्रेष्ठ सन्त पुरन्दरदासकी तरह डॉ० सरगु कृष्णमूर्तिजी भी मानते हैं—‘**हनुमन मतवे हरिय मतवु**’ अर्थात् हनुमान्का मत ही हरि अर्थात् रामका मत है। सरयू रामायणके १८वें भागमें सरगुजी कथासार देते हुए लिखते हैं—समूचे रामकाव्यमें रामचन्द्रजीके उपरान्त अत्यन्त दिव्य एवं सक्षम पात्र हनुमान्जी ही हैं। स्वयं श्रीहनुमान्जी कहते हैं—‘**मैं सदा तुम्हारा हूँ मन में। तुम हो मेरे मन में, तन में॥**’

तुलसी रामायणमें कथाका आरम्भ रामावतारके कारणोंको स्पष्ट करनेके द्वारा होता है। सरयू रामायणका आरम्भ अपने अनुज समेत सरयू-प्रवेश करनेवाले रामको देख दुखी होनेवाले हनुमानसे होता है। ‘राम कहाँ मम

**राम कहाँ'** कह दुखी होनेवाले हनुमान्‌के दुःखको दूर करनेके लिये माँ अंजनाकी प्रार्थनाको स्वीकारकर खुद शिव और पार्वती रामको मनाकर किष्किन्धा लाते हैं। हनुमान्‌को आश्वासन देते हुए राम कहते हैं—

हनुमान जहाँ हो राम वहीं। हर एक हमारा काम वहीं॥

३२वें भागके अन्तमें भू-परसे उठ रही हनू पँछकी प्रशंसा वे अपने सीता-राम-संवादमें करते हैं। राम कहते हैं—

यह (वाल) धरा स्वर्ग का महासेतु । मानवता का है महाकेतु ॥  
हनु पँछ कल्पतरु धरणी का । आधार काष्ठ भवतरणी का ॥

सरयू रामायणके आरम्भ वाक्य (पद) और अन्तिम पद साबित करते हैं कि वास्तवमें सरयू रामायण हनुमच्चरितम् ही है।

डॉ० सरगु कृष्णमूर्तिने देश-विदेशके काव्यों, लोकगीतों एवं पुराणोंसे प्रेरणा ग्रहणकर कल्पनाका प्रश्रय लेकर औचित्यके धरातलपर नये प्रसंगोंके पुष्पोंसे रामचरितकी माला गूँथी है। हनुमान्-चरित्रको उजागर करनेके लिये अनेक स्रोतोंसे डॉ० सरगुने कथा-संकलन किया है। उनकी कल्पनाके अनुसार राम-जन्मके पहले ही हनुमान्का जन्म हुआ था। जब पुत्रकामेष्टि याग चल रहा था, तब हनुमान् वहाँ उपस्थित थे। अपनी माँ अंजनासे वे कहते हैं—

माँ उस समय मैं भी जाकर। शतकोटि मन्त्र पढ़ता गाकर॥

जब वहाँ उपस्थित ब्राह्मण और ऋषीश्वर हनुमान्जीसे उनके गोत्रके बारेमें पूछते हैं तो वे जवाब देते हैं—‘हरि गोत्र विमल मेरा।’

रामके नामकरण-उत्सवके समयपर भी हनुमान् वहाँ उपस्थित थे। परशुराम रामको अपना नाम देते हैं। दूर खड़े होकर हनुमान्जी रामय्या, रामय्या कहते हैं। 'रामैया' शुद्ध तेलुगु शब्द है, जिसका तात्पर्य लिये सबको रमानेवाला है। हनुमान्जीद्वारा यह शब्द सुनकर सब मसकराते हैं।

एक बारकी बात है, हनुमान्जी शिवजीके साथ रामके यहाँ जाते हैं। वहाँ रामजीका जूठन खाते हैं। शिव मदारी बनते हैं तो हनुमान् बन्दर बनकर अपने

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

नाचसे रामजीका मन बहलाते हैं।

हनुमान्की जन्मसम्बन्धी बातोंका जिक्र हम न दक्षिण भारतीय रामायणोंमें देख सकते हैं और न ही वाल्मीकि या तुलसीके रामायणमें। सरयू रामायणके दूसरे भागमें सरगुजी लिखते हैं—

रुद्रांश वायु पथमें आकर। केसरी सती आश्रय पाकर॥  
हनुमत्स्वरूप सादर धरता। अंजना गर्भमें घर करता॥

हनुमान् ग्यारहवें रुद्रके अवतार माने जाते हैं। उनके शिवांश होनेकी बात स्कन्द, वराह, भविष्य, अग्नि आदि पुराणोंके साथ-साथ महाभागवत, बृहद् धर्म आदि उपपुराणोंमें भी देख सकते हैं। तेलुगुके रामायण-कल्पवक्षमें इसका जिक्र है।

भाग दोमें ही एक जगह पायस-वितरणकी चर्चा करते हुए सरगुजी लिखते हैं—

कैकई अंश खग ले जाता। केकसी सदन धरकर आता ॥  
केकसी प्रसन्न उछलती है। गस्थियाँ भाग्यकी खिलती हैं ॥

आनन्दरामायणके अनुसार एक चील पायसका एक अंश ले जाकर घोर तपस्या करनेवाली अंजनाकी हथेलीमें डाल देती है। उसके ग्रहण करनेसे अंजना गर्भ धारण करती हैं और हनुमान्को जन्म देती हैं। पर सरगजी अंजनाका नाम न लेकर केकसीका नाम लेते हैं।

भाग १८ में ‘रामकाव्यमें हनुमान्जीका स्थान’ उपशीर्षकके अन्तर्गत सरगुजी लिखते हैं—अंजना एवं केसरीके नन्दन हनुमान्जी वायुपुत्र भी हैं तथा शिवजीके अंश भी। कतिपय रामकाव्योंमें रावण स्वयं कहता है कि हनुमान्जी साक्षात् शंकर हैं। स्कन्दपुराणमें ‘रुद्रात्मकाय’ शब्दका प्रयोग हनुमान्के लिये हुआ है। मराठीके सन्त तुकाराम भी कहते हैं—‘तुका म्हणे रुद्रा अंजनाचि या कुमार।’ किष्किन्धामें रामके आगमनके उपरान्त रामायणकी जितनी भी घटनाएँ आती हैं, उनका पूर्ण संचालन हनुमान्जीद्वारा होता है, अर्थात् पूरी कहानीके सत्रधार या मलाधार हनुमान्जी ही हैं।

वाल्मीकि, तुलसी या तेलुगुके रामायणोंमें राम और हनुमान् एक-दूसरेके आमने-सामने पहली बार ऋष्यमूक पर्वतके पास ही आ जाते हैं। ब्राह्मणवेषधारी हनुमान् राम और लक्ष्मणसे पृछते हैं—क्या आप ब्रह्मा, विष्णु,

महेश—इन तीनों देवताओंमेंसे कोई हैं या आप दोनों नर और नारायण हैं। हनुमान्जीकी बातोंको सुनकर वाल्मीकिके राम लक्ष्मणसे कहते हैं—‘ये मधुरभाषी हैं। इनका उच्चारण शुद्ध है। इनके बोलनेकी शैली बहुत उत्तम है। ये न तो अधिक शब्द बोले न कम। ये तीन वेदोंके ज्ञाता मालूम पड़ते हैं।’ सरगुके हनुमान् दूरसे राम-लक्ष्मणको देखते हैं। उनको पहचान जाते हैं। तुलसीके हनुमान्की ही भाँति सरगके हनुमान् भी सग्रीवको बताते हैं—

ये हरि एवं शेष हैं, मीन-मेष । क्यों ? होगा कोई शुभ विशेष ॥

हनुमान्को देखकर राम लक्ष्मणसे कहते हैं—  
इसका स्वरूप दिव्याभिराम।

सागर का गर्जन है स्वर में। सुरता शोभित है इस नर में॥  
आगे यह भी कहते हैं—

वायु का गमन, वज्र की शक्ति । सूर्य का तेज, वाणी-सदुक्ति ॥  
शत पर्वत बल है नर वर में । जाने क्या है इनके उर में ॥

तुलसीके हनुमान् राम और लक्ष्मणमें देवत्वको देखते हैं। बुद्धिमानोंमें अग्रगण्य हनुमान्की प्रशंसा वाल्मीकिके राम करते हैं, पर सरगुके हनुमान्की प्रशंसा वाल्मीकि और तुलसीसे एक पग आगे बढ़कर राम करते हैं। हनुमान्की वाणी-सद्गुक्तिके साथ-साथ उनके शत पर्वतबलकी भी प्रशंसा करते हैं।

सीताकी खोजमें निकले वाल्मीकिके हनुमान् रावणके अन्तःपुरका वर्णन विस्तृत ढंगसे करते हैं। रावणके शयनागारमें मन्दोदरीको देख भूलसे उन्हें सीता समझ लेते हैं। फिर अपनी वानर-बुद्धिपर शर्माते हैं। तुलसीके हनुमान् ‘मंदिर महँ न दीख बैदेही’ (सुन्दरकाण्ड) कह वहाँसे बाहर आ जाते हैं। सरगुके हनुमान्में तुलसी-जैसी संक्षिप्तता भले ही न हो, वाल्मीकि-जैसा विस्तार भी नहीं है। सरगुके हनुमान् अपनी सोचपर ‘रावण समीप है सीता क्या’ पछताते हैं। अपनी सोचको पाप मानते हैं—

मैथिली नहीं यह हो सकती । यों राम प्रिया न सो सकती ॥  
मेरे मन में छा गया ध्वान्त । हो पाप शान्त, हो पाप शान्त ॥

तुलसीके हनुमान् पेड़परसे राम-मुद्रिकाको गिराकर रामका गुण-गान करते हैं। श्रवणामृतकथा सुनानेवालेको सामने आनेके लिये जब सीताजी कहती हैं तो हनुमान्



शक्ति में वज्र युद्ध में काल। हठता में है यह लोकपाल॥  
 हनुमान हिमालय निश्चय में। संदेह नहीं इनकी जय में॥  
 सरगुके जाम्बवान् हनुमान्से समुद्रको लाँघनेके  
 लिये प्रोत्साहित करते हुए कहते हैं—  
 बलवान और हो बुद्धिमान। शक्तिमें वज्र हो रवि विधान॥  
 जाम्बवान्की बातोंको सुनकर सरगुके हनुमान्में आत्म-  
 विश्वास बढ़ जाता है। वे उनको आश्वासन देते हैं—  
 हाँ अभी जलधि तर जाऊँगा। लंका में आग लगाऊँगा॥  
 सीताका पता लगाऊँगा। रावण को मार गिराऊँगा॥

सरयू रामायणके ३२वें भागमें रामके राजतिलककी घोषणा सरगुजी हनुमान्से करवाते हैं—  
 कल राम तिलक है सब आये। सौभाग्य सभी अपना पाये॥

सरगुजी अपने रामके द्वारा यों कहलवाते हैं—  
 ‘सीते हनुमान्। एकैक वीर है बल निधान॥’

अपनेको मारुतिका दास माननेवाले सरगुजी अपनी मनोभावनाको इस प्रकार प्रकट करते हैं—

मैं रहूँ मारुती के संगमें। मैं रँगू राम रस के रँगमें॥  
 कपि पूजित हरिपद पद्मों में। मैं भूंग बनूँ रस-सन्धोंमें॥

## विरह

( श्रीइन्दरचन्द्रजी तिवारी )

मेरे विरहका कारण है कि आप कभी मुझे मिले थे।

मेरे विरहका कारण हमारा आपसे मिलना ही तो है। अगर आपसे मिला न होता, आपको देखा न होता, आपके साथ उठा-बैठा न होता, खाया-पिया, घूमा-फिरा न होता तो फिर विरहका कारण ही कहाँसे उत्पन्न होता।

मुझे अपने विरहपर पूर्ण विश्वास है चूँकि मुझे मालूम है कि मेरे विरही बन जानेपर आप अपनेको रोक न पायेंगे, परंतु मेरे पास आ जायँगे। मेरी विरह-वेदना मिटानेहेतु। मुझे अपने मिलनसे कृतकृत्य करनेहेतु।

मीरा, सहजो, दया, सूरको आप उनके विरही बन जानेपर ही तो प्राप्त हुए थे।

गोपियोंका विरह तो आप जीवनभर भुला ही न पाये। विरही हारता नहीं, वह हमेशा जीतता ही तो है। प्रीतम चला गया। चारों दिशाएँ अन्धकारसे घिर गयीं। विछोहकी कालिमाने मिलनसे दूर कर दिया। विरहीने कमलकी भाँति अपने नेत्र बन्द कर लिये और प्रीतमका निरन्तर ध्यान करता रहा। सुबह हुई, मिलनका प्रकाश चारों दिशाओंमें फैल गया। पुनः कमलकी कलियोंकी भाँति विरहीने बाँहें फैलाकर उसका स्वागत किया। पुनः मिलनकी निधि पाकर वह नाच उठा, मदोन्मत्त होकर उसके पाँवोंमें बँधे घुँघरू झंकार उठे, वह मदोन्मत्त

विश्वके निर्माणका कारण यह विरह ही तो है।

अणु-अणुसे मिलनेहेतु व्याकुल है। संगीत और सृजनका नृत्य समग्र ब्रह्माण्डोंमें होने लगता है।

और उसी दिन तो प्रलय होती है न, जिस दिन विरह समाप्त हो जाता है। पुष्पके खिलनेका कारण वह विरह ही तो है।

मादक मन्द बयार शीतल विरहाग्निका ही दिव्य सन्देश देकर तो अणु-अणुको आनन्दित करती है। उनको लुभाती है। दिव्यानन्द प्रदान करती है।

आपसे मिलनेका कारण यह विरह ही तो है। अगर विरह नहीं तो मिलन कैसा? आपको पानेका रास्ता यह विरह-पथ ही तो है।

कोयलकीकूक, भ्रमरोंका गान, पक्षियोंका कलरव, संगीतके दिव्य स्वर, काव्यकी पंक्तियाँ आदि सब विरह-सागरमें ही तो डूबी हुई हैं। अगर विरह न होता तो इन अलभ्य वस्तुओंका पाना कैसे सुलभ हो पाता।

विरहका अर्थ है व्याकुलता और व्याकुलताका अर्थ है प्रेमाश्रु और प्रेमाश्रुका अर्थ है आपसे मिलन—आह्लादता, नर्तन, मदोन्मत्तता।

हे प्रभु! कभी इस अकिंचन कुपात्र, कुचालीको भी दे देना थोड़ा-सा अमृत जिसे पानकर निरन्तर तेरे दिव्य विरहमें दग्ध होता रहूँ और गाता रहूँ—‘राधे



## संत-वचनामृत

( वृन्दावनके गोलोकवासी संत पूज्य श्रीगणेशदास भक्तमालीजीके उपदेशपरक पत्रोंसे )

★ 'राम' इस नामकी महिमा अपार है। मरा-मरा कहकर भी ऋषि ब्रह्मस्वरूप हो गये। भगवान्का नाम जब तन्मय होकर लिया जाता है तब हृदयमें नामी तथा उसकी लीलाएँ प्रकट हो जाती हैं। अन्तःस्थलमें दैवीगुण प्रकट हो जाते हैं। समस्त अयोध्यावासी रामका, राम नामका आश्रय पाकर कृतार्थ बन गये। इसी प्रकार श्रीराधा सर्वेश्वरीने नामोंकी महिमा, उनका अर्थ कहकर श्रीयशोदा माताके कष्टको दूर किया। उनके हृदयमें भक्तिका उल्लास प्रकट होकर अनन्त सुख देने लगा।

★ देवता, मनुष्य, राक्षस कोई भी भगवान्के नामका आश्रय लेकर भगवान्को प्राप्त कर सकता है। मृत्यु-लोकमें मरण निश्चित है। अन्तमें भगवान्का नाम मुखपर आये इसलिये पहलेसे ही नामका अभ्यास करना चाहिये। घरके कामोंको करते समय मनमें और स्पष्ट उच्चारण करते-करते जब अभ्यास बढ़ जाता है, तब अन्तमें भगवान्का नाम आता है। उससे इस लोकमें परम कल्याण होता है, परलोकमें भगवद्धामका वास मिलता है। भगवान्का नाम सबको आनन्द प्रदान करे, सभी रोगरहित हों। सभी निर्भय हों। जय जय श्री राधे राधे।

★ एक संत टट्टी-पेशाबके समय जिह्वाको दाँतोंसे दबाकर रखते थे। शिष्यने पूछा तो कहा कि अभ्यास ऐसा बन गया है कि जिह्वा रोकनेसे नहीं रुकती है, नामका उच्चारण होता है। नाम-नामीमें अभेद होनेके कारण नाम लेनेपर नामी प्रकट हो जाता है। मलत्याग स्थानपर प्रभुका आना ठीक नहीं, अतः जिह्वाको दाँतसे दबाकर रखा है। शिष्यने कहा यदि उस समय शरीर छूट गया तो क्या होगा? गुरुदेवने जिह्वाको स्वतन्त्र कर दिया। शिष्यको धन्यवाद दिया।

★ एक सेठ अपने घरकी दुकानके कार्योंमें इतने व्यस्त रहते थे कि उन्हें नाम लेनेकी फुरसत नहीं मिलती थी। जब टट्टीमें जाते तो उस समय उन्हें अवकाश मिलता और वे राम-राम रटते। श्रीहनुमान्जीको क्रोध

आया कि कामोंको छोड़ नहीं सकता है। टट्टीमें राम-राम करता है। हनुमान्जीने पीठपर एक लात मारी। रात्रिके समय श्रीहनुमान्जी श्रीरामजीकी सेवा करने लगे तो, जब श्रीरामजीकी पीठपर हाथ लगाया तो श्रीरामजी कराहने लगे, पीठमें बड़ी पीड़ा है। बहुत पूछनेपर कहा—तुमने ही मारा है। हनुमान्जीकी समझमें नहीं आया। अत्यन्त प्रार्थना करनेपर श्रीरामजीने बताया। तुमने मेरे प्रेमी भक्तको कीर्तन करते वक्त मारा। उस चरण-प्रहारको यदि मैं अपनी पीठपर न लेता तो वह कोमल शरीरवाला सेठ मर ही गया होता। अतः मैंने उसकी रक्षा की। हनुमान्जीने भूल स्वीकार करके क्षमा-याचना की। सेठको राम नामका उपासक माना, आदर किया। तात्पर्य यह है कि राम नामका जप पवित्र-अपवित्र सभी अवस्थाओंमें किया जा सकता है। दुःख यही है कि हम नामका आश्रय लेकर उसका जप नहीं करते।

★ संसारके अनेक रोग हैं और उनकी अलग-अलग औषधियाँ हैं, परन्तु राम नाम तो सभी रोगोंकी रामबाण औषध है। शोक-मोह-लोभ आदि सभी रोगोंके लिये एक राम नाम ही महान् औषध है। प्रह्लादजीने होलिकाके जल जानेपर कहा कि देखो, जिसे न जलनेका वरदान था, वह भी जल गयी, मेरे चारों ओर शीतलता है। मेरा एक रोम भी नहीं जला। रामनामके जापक निर्भय रहते हैं।

★ भगवान्के नाम, रूप, लीला और धाम—ये चारों सच्चिदानन्दमय हैं। एकको पकड़नेसे चारों पकड़में आ जाते हैं। सुलभ एवं शक्तिमान् होनेसे नाम ही चारोंमें श्रेष्ठ है। नाममें लीला भरी है। राममें रामायण, कृष्ण नाममें भागवतपुराण स्थित है। नाम पुकारनेसे रूपका आकर्षण होता है। नाममें धाम=तेज और धाम=लीला-भूमि ये व्याप्त हैं। वट-बीजमें जैसे विशाल वृक्ष व्याप्त है, उसी प्रकार नाममें सब कुछ है। नामका आश्रय लेनेसे रूप, लीला और धामका आश्रय हो जाता है।

[ 'परमार्थके पत्र-पुष्प'से साभार ]

**संत-चरित—**

**नथ**

[ सन्त पुरन्दरदासका एक जीवन-प्रसंग ]

( श्रीशिवचरणजी चौहान )

सैकड़ों साल हुए, महाराष्ट्रके पुरन्दर कस्बेमें एक स्वर्णकार रहता था। नाम था—श्रीनिवास नाइक। सोने-चाँदीके आभूषणोंके निर्माणमें उसका कोई जोड़ नहीं था। उसके गढ़े गहनोंकी एक धाक थी। इसी कारण विजयनगर दरबारमें उसकी पहुँच थी। रानियोंके गहने श्रीनिवास ही गढ़ता था। करोड़ोंकी सम्पत्ति थी उसके पास।

एक दिन एक गरीब ब्राह्मण सबेरे-सबेरे उसकी दुकानपर आ गया। उसने कहा—‘सेठजी! मेरी बेटीकी शादी है। बड़ी उम्मीद लेकर आया हूँ। आपको तो ईश्वरने बहुत दिया है, कुछ दान दे दें तो मेरी बेटीके हाथ पीले हो जायँ।’

सुनकर सेठ श्रीनिवासको गुस्सा आ गया। बोहनी न बढ़ा सबेरे-सबेरे दानका ठट्ठा। उसने ब्राह्मणको बहुत भला-बुरा कहा और भगा दिया। ब्राह्मणको पता नहीं क्या सूझा, वह सेठजीके घर चला गया। सेठानीको उसने अपनी करुण कहानी सुनायी और बेटीकी शादीके लिये मदद माँगी। सेठानी पसीज गयीं। उन्होंने अपनी सोनेकी नथ (नथुनी) उतारकर ब्राह्मणको दे दी। ब्राह्मण परम चतुर निकला। वह नथ लेकर सेठके पास बेचने पहुँच गया। सेठजीने सोनेकी नथ देखी तो पहचान गये। ये तो मेरी पत्नीकी है। उन्होंने नथको तिजोरीमें रखा, ताला लगाया और चल दिये सेठानीकी खबर लेने। घर पहुँचकर उन्होंने सेठानीको बहुत उलटा-सीधा कहा। एक-दो हाथ भी जमा दिये और कहा कि ऐसी ही दानी हो तो अपने बापकी कमाई दान करती। अपमानित सेठानीने आत्महत्या करनेकी सोची। उसने एक प्यालेमें जहर घोला। जहर पीनेके लिये जैसे ही उसने प्याला उठाया। उसे जहरके जलमें अपनी नथ दिखायी दी। उसने प्यालेसे नथ निकाली और सेठको दे दी। नथ देखकर सेठजी हक्के-बक्के रह गये। यह नथ तो वह तिजोरीमें रखकर ताला लगा करके आये थे। सेठानी तो

वहाँ गयी नहीं तो यह नथ उनके पास आयी कैसे?  
सचमुच दरिद्र ब्राह्मणके वेषमें स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण  
आये होंगे परीक्षा लेने मेरी। तभी तो चमत्कार हुआ है।

इस घटनासे सेठ श्रीनिवासका मन बदल गया। उन्होंने अपनी करोड़ोंकी सम्पत्ति गरीबोंमें बाँट दी और पत्नीके साथ साधु बन गये। वह प्रभुका गुणगान करते हुए गाँव-गाँव डोलने लगे। पुरन्दर कस्बेके निवासी होनेके कारण लोग उन्हें पुरन्दरदास कहने लगे। उन्होंने विठ्ठलदास (विठोबा) यानी श्रीकृष्ण, राम एवं गणेशकी भक्तिमें पद लिखे तथा उन्हें संगीतबद्ध किया। पदोंमें श्रीकृष्णका गुणगान दास्य तथा कहीं-कहीं सखाभावमें मिलता है। वेदान्त-ज्ञान भी है। कहते हैं, उनके पदोंके गायनके समय स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण नृत्य करने लगते थे।

पुरन्दरदासके आश्रयदाता विजयनगरके तपस्वी व्यासराम स्वामी थे। विजयनगर राज्यकी उन दिनों पूरे भारतमें ख्याति थी। विजयनगरके यशस्वी राजा कृष्णदेव राय, जिनके दरबारमें विद्वानोंकी भीड़ रहती थी, स्वयं चलकर पुरन्दरदासका संगीत सुनने आते थे।

पुरन्दरदासने संगीतकी दो विधाओं—कर्नाटक संगीत तथा हिन्दुस्तानी संगीतमें एक कर्नाटक संगीतकी नींव डाली। वे कर्नाटक संगीतके आदिगुरु माने जाते हैं। मन्दिरोंमें हरिकथाकी संगीतमय शुरुआत भी पुरन्दरदासने की। यही नहीं उन्होंने सरलि जण्डै और गौतमके रूपमें अनेक पाठ भी तैयार करवाये। उन्हें कर्नाटक सरगमका भी आद्यगुरु माना जाता है। उनके संगीतमें विलम्बित, मध्य तथा द्रुत लयमें प्रबन्ध मिलते हैं। पुरन्दरदासकी बनायी संगीत—भूमिपर चलकर त्यागराज, श्यामाशास्त्री, मुत्तूस्वामी दिक्षितारने कर्नाटक संगीतको दुनियाभरमें लोकप्रिय कर दिया। आधुनिक कालमें भारतरत्न श्रीमती एम०एस० सुब्बुलक्ष्मीने अपनी मीठी वाणीसे पश्चिमी देशोंके संगीत—प्रेमियोंको कर्नाटक संगीतसे आह्लादित किया।

अन्तकालमें क्या करें ?

( श्रीरूपचन्दजी शर्मा )

मनुष्य जब किसी यात्रामें जाता है तो कितनी तैयारी पहलेसे करता है, पर अन्तकालकी तैयारी कोई बिरला ही करता है। अन्त समयका नाम और ध्यान आते ही प्राणी घबरा जाता है।

ब्रह्मलीन स्वामी श्रीरामसुखदासजी कहते हैं कि ‘शरीर अनित्य है, पर उसको धारण करनेवाला नित्य है। शरीरके मरनेपर आत्माकी सत्ता नहीं मिटती, नहीं तो श्राद्ध-तर्पण आदि क्यों करते ? आत्माका घर यहाँ नहीं है, अपितु परमात्माका परम धाम है।’

मानव-जीवन दुर्लभ है। यह पूर्वजन्मके पुण्यकर्मों, संस्कारों तथा ईश्वरकी अहैतुकी कृपाके फलस्वरूप प्राप्त हुआ है। गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं—

बड़ें भाग मानुष तनु पावा । सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा ॥

जीव जब माताके गर्भमें नारकीय जीवन व्यतीत करता है, तब वह आर्त भावसे प्रार्थना करता है कि प्रभो! मुझे इस यातनासे मुक्ति दिलाओ, मैं नित्य तेरी सेवा करूँगा और आवागमनके चक्रसे बचनेके लिय भक्ति करूँगा। दुर्भाग्यकी बात है कि वह संसारमें आकर अपनी पूर्व प्रतिज्ञाको भूल जाता है। मायाके प्रभावमें आकर संसारमें आसक्त हो जाता है। जबतक बच्चा रहा, खेल और पढ़ाईमें डूबा रहा; जब जवान हुआ तो सांसारिक धन्धोंमें फँसा रहा और जब बूढ़ा हुआ तो चिन्ताओंने घेर लिया। कबीरदासजी कहते हैं—

रात गँवाई सोय कर, दिवस गँवायो खाय।  
हीरा जन्म अमोल यह, कौड़ी बदले जाय॥  
आये हैं सो जायेंगे, राजा रंक फकीर।  
एक सिंहासन चढ़ि चले, एक बँधे जंजीर॥  
चार पहर धन्धे गया, तीन पहर गया सोय।  
एक पहर नाम बिन, तेरी मुक्ति कैसे होय॥

संसारके राग-रंगमें वह यह भूल जाता है कि जीवनका वास्तविक लक्ष्य क्या है ? मैं कौन हूँ ? कहाँसे आया हूँ ? कहाँ जाना है ? मुझे क्या करना चाहिये ? इन बातोंका स्मरण वृद्धावस्थामें जाकर होता है, तबतक बहुत देर हो चुकी होती है। शरीर शिथिल हो जाता है।

पश्चात्ताप करनेके अलावा उसके पास कुछ नहीं रहता।

पूर्वजन्मके पुण्यसे यदि उसको सत्संगमें जानेका मौका मिल भी जाय फिर भी वह भक्ति-मार्गपर चलनेका कार्यक्रम स्थगित करता रहता है। अभी उमर क्या है ? फिर भज लेंगे। एक सन्तने कहा है—

आये थे जिस बातको भूल गये वह बात।  
आगे ले कर क्या चले खाली दोनों हाथ॥  
गीता (२। ७)-में श्रीकृष्णजी कहते हैं—  
जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवो जन्म मृतस्य च।

जो प्राणी जन्म ग्रहण करता है, उसे समय आनेपर मरना ही पड़ता है और जो मरता है, उसे जन्म लेना पड़ता है।

मृत्युके सम्बन्धमें भिन्न-भिन्न धारणाएँ हो सकती हैं, परन्तु एक विषयमें सभी एक मत हैं कि मृत्युका अर्थ आत्माका अन्त नहीं है। जन्म और मृत्यु जीवनकी शाश्वत प्रक्रिया हैं, काल मृत्युसे आक्रान्त प्राणीकी रक्षा औषध, तपस्या, दान-पुण्य, माता-पिता, पुत्र-बान्धव आदि कोई नहीं कर सकते।

जबतक मृत्यु दूर है, तबतक हमारा इन्द्रियों, मन और बुद्धिपर अधिकार है और जबतक समय, साहस, सामर्थ्य तथा स्वास्थ्य अनुकूल है, तबतक आगे जानेके साधन तत्परतासे कर लेने चाहिये।

याद रखिये, संसार असार है। शरीर रोगोंका घर है। मन मलिन है। चित्त चंचल है और मृत्यु प्रतिक्षण निकट आती जा रही है। उसे सदा याद रखते हुए उस मनुष्यको सदा भगवन्नाम-स्मरण, भगवल्लीलाओंका चिन्तन, तीर्थयात्रा, गोदान आदि सत्कर्म करने चाहिये; साथ ही मनमें संसारके प्रति वैराग्यका भाव रखते हुए उसमें आसक्ति नहीं रखनी चाहिये।

एक कविका कथन है—  
अबसे तू कर तैयारी, जाना जरूर है।  
तू थक चुका है भारी मंजिल भी दूर है॥  
सराये फानी है दुनिया, तू क्यों डेरा लगा बैठा।  
बेगानी हो चली है जो, उसे अपनी बना बैठा॥

## श्रीरामचरितमानसमें शक्तितत्त्वनिरूपण

( श्रीराधानन्दसिंहजी, एम०ए०, पी-एच०डी०, एल०एल०बी० )

श्रीरामचरितमानस मूलतः श्रीसीतारामके अभिन्न भावमूलक दर्शनका महाकाव्य है। इसमें 'गिरा अरथ जल बीचि' की तरह शक्ति (सीता) और शक्तिमान् (श्रीराम) की सर्वात्मसत्ताका सम्यक् निरूपण हुआ है।

श्रीसीताजी उद्भव-स्थिति-संहारकारिणी हैं, क्लेश-हारिणी हैं और सर्वकल्याणमयी हैं। गोस्वामी तुलसीदासजी मानसके बालकाण्डके मंगलाचरणमें कहते हैं—

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।

सर्वश्रेयस्करिं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्॥

उद्भव, स्थिति और संहार मूल प्रकृतिके कार्य हैं। यहाँ क्लेशहारिणी और सर्वश्रेयस्करी कहकर उनकी अलग महत्ता स्थापित की गयी है। सच तो यह है कि परमात्मा नित्यमुक्त चेतनस्वरूप हैं। वे निर्गुण, निराकार, निर्विकार, सनातन और एकरस हैं। उनकी मायिक शक्ति अव्यक्त रूपमें उन्हींमें लीन रहती है। लीलाका प्रारम्भ उनके प्रकटरूप धारण करनेपर होता है। मायाशक्ति आवरण और विक्षेपसे लीला करती है। वह अपने प्रभावसे परमात्माको एकांशमें आवृत कर लेती है। परमात्मा योगनिद्रामें चले जाते हैं और तब ब्रह्मादि सृष्टिका विस्तार होता है। सृष्टिका विस्तार ही मायाकी विक्षेपशक्ति है। गोस्वामीजी मानसमें कहते हैं—

बाम भाग सोभति अनुकूला। आदिसक्ति छबिनिधि जगमूला॥  
जासु अंस उपजहिं गुनखानी। अगणित लच्छि उमा ब्रह्मानी॥  
भृकुटि बिलास जासु जग होई। राम बाम दिसि सीता सोई॥

(रा०च०मा० १।१४८।२—४)

सीताजी विश्वातीता आद्या पराशक्ति हैं। सारी शक्तियाँ श्रीसीताजीकी ही कला-अंश-विभूति हैं। वे मूलप्रकृति महामाया हैं। जैसे श्रीरामजीके अंशसे नाना शम्भु, विरंचि और विष्णु पैदा होते हैं, ( संभु विरंचि बिष्णु भगवाना। उपजहिं जासु अंस ते नाना॥) वैसे ही श्रीसीताजीके अंशसे अगणित उमा, रमा, ब्रह्माणी पैदा होती हैं। मनुशतरूपा निर्गुण, निराकार, अखण्ड, अनादि ब्रह्मका दर्शन करना चाहते थे, परंतु आदिशक्तिके साथ हिन्दुधर्म की स्थापना के लिए यह ही कि निर्गुण निराकार ब्रह्म

आदिशक्तिके बिना सगुण-साकार हो ही नहीं सकते। अतः भगवान्ने आदिशक्तिसहित उन्हें दर्शन दिये।

स्पष्टतः सीताजी आदिशक्ति हैं, जिनके भृकुटि-विलासमात्रसे जगत्की उत्पत्ति, पालन और संहार शक्तियाँ प्रकट होती हैं। श्रीराम कहते हैं—

आदिसक्ति जेहिं जग उपजाया। सोउ अवतरहि मोरि यह माया॥

यहाँ सीताजी त्रिगुणमयी परमेश्वरी महालक्ष्मी ही सबका आदि कारण हैं। वे ही दृश्य और अदृश्यरूपसे सम्पूर्ण विश्वको व्याप्त करके स्थित हैं। प्राधानिक रहस्यमें यह रहस्य उद्घाटित किया गया है कि महालक्ष्मी ही महाकाली (तमोगुणरूप उपाधिके द्वारा) तथा महासरस्वती (सत्त्वगुणरूप उपाधिके द्वारा) का रूप धारण करती हैं। दुर्गासप्तशतीमें भी तीन चरित्र महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वतीका है, जिसमें महालक्ष्मीरूपा दुर्गा ही लोक और शास्त्रमें विशिष्ट हैं।

श्रीरामचरितमानसमें श्रीसीताजीका अनेक प्रसंगोंमें यह रूप वर्णित है। जनकपुरकी जानकीजी महालक्ष्मीरूपा हैं, जो परब्रह्म श्रीरामकी अर्धांगिनी हैं। बारातके आगमनपर महालक्ष्मी जानकीकी महिमाका वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं—

जानी सियें बरात पुर आई। कछु निज महिमा प्रगटि जनाई॥  
हृदयें सुमिरि सब सिद्धि बोलाई। भूप पहनुई करन पठाई॥

सिद्धि सब सिय आयसु अकनि गई जहाँ जनवास।

लिएँ संपदा सकल सुख सुरपुर भोग बिलास॥

निज निज बास बिलोकि बराती। सुरसुख सकल सुलभ सब भाँती॥  
बिभव भेद कछु कोउ न जाना। सकल जनक कर करहिं बखाना॥  
सिय महिमा रघुनाथक जानी। हरषे हृदयें हेतु पहिचानी॥

(रा०च०मा० १।३०६।७-८, १।३०६, १।३०७।१—३)

स्पष्ट है कि महालक्ष्मीके संकेतमात्रसे सभी सिद्धियाँ सारी स्वर्गीय सम्पदाके साथ समुपस्थित हो गयीं। श्रीसीताजी महालक्ष्मी हैं, इसका प्रमाण वहाँ मिलता है, जहाँ विवाहके समय इन्द्राणी, सरस्वती, लक्ष्मी और भवानी आदि श्रेष्ठ नारियाँ का सुन्दर वेष बनाकर सब रत्नवासमें जा मिलीं।





**कहानी—**

## निवेदिता

( श्रीशंकरलालजी माहेश्वरी )

शहरकी छोटी पुलियाके दाहिनी ओर अन्तिम छोरपर मेरा मकान है। घरमें दादा-दादीके अलावा मेरी माँ और मैं साथ-साथ रहते हैं। पिताजी तो मेरे जन्मसे पहले ही भगवान्‌के घर चले गये। मेरा नाम निवेदिता है। मेरे घरके पड़ोसहीमें मनोरोग-विशेषज्ञ डॉ० गुप्ताका क्लीनिक है, जहाँ अक्सर बड़े-बूढ़े इलाजके लिये आते हैं। डॉ० गुप्ता सेवा-निवृत्तिके बाद बुजुर्गोंके रोगोपचारमें ही सेवा-सुखका अनुभव करते हैं।

इसी क्लीनिकसे सटे हुए खाली वर्गाकार अहातेमें एक छायादार वट वृक्ष है। जहाँ एक लड़का प्रातः ठीक आठ बजे आता है और वृक्षके नीचे जूते गाँठनेकी दूकान सजा देता है। गीत गुनगुनाते हुए अहातेकी साफ-सफाई करता है और ग्राहकोंके बैठनेके लिये एक रंगीन चटाई बिछा देता है। जूतोंपर पॉलिश करानी हो या फटे जूतोंपर पैबन्द लगाना हो तो शहरके लोग प्रायः इसीके पास आते हैं, क्योंकि इससे अपने कामके साथ ही मधुर गीतोंका आनन्द भी ले सकते हैं। साथ ही वह जीवनमें साफ-सफाईका महत्त्व भी बताते नहीं थकता और कतिपय रोगोंके घरेलू नुस्खे भी बताता रहता है।

दसवीं कक्षा तो इसने अनाथालयमें रहते हुए पास कर ली, पर आगेकी पढ़ाई उस समय थम गयी जब अनाथालयने उसकी छुट्टी कर दी। जब यह सात वर्षका था तभी इसके माता-पिताका सड़क-दुर्घटनामें देहान्त हो गया था। पहले इसने अनाथालयकी शरण ली तो बादमें अपने मामाके घर रहकर अपना पुश्तैनी धन्धा सीख लिया और यहाँ अपनी यह दूकान खोल ली। रोहित नाम है उसका।

खाली समयमें वह अक्सर डॉ० गुप्तासे बातें करता रहता। उनके क्लीनिककी भी साफ-सफाई कर देता, मरीजोंकी सेवा-चाकरीका भी समय निकाल लेता। डॉ० गुप्ता उसकी दिनचर्यासे प्रभावित थे। एक दिन डॉ० गुप्ता भी अपने जूतोंकी मरम्मतके लिये इसकी दूकानपर बैठ गये। बातें होने लगीं तो रोहित डॉक्टर साहबसे

कहने लगा—डॉक्टर साहब, आपके जूतोंकी यह जोड़ी सलामत रहे। कभी-कभी मुझसे इसी तरह जाँच करवा लिया करें। यदि छोटी-मोटी बीमारी हुई तो हाथों-हाथ उसी समय ठीक हो जायगी। यदि बीमारी बढ़ती गयी तो फिर मेरे बसकी बात नहीं रहेगी। सही समयपर इलाज नहीं करवानेपर प्राण-पखेरू भी उड़ सकते हैं। अभी तो साधारण चीर-फाड़से ही काम चल जायगा। यदि घसीटते ही रहे तो बीमारी लाइलाज हो जायगी। मेजर ऑपरेशनमें खर्चा भी अधिक होगा और जीनेकी गारण्टी भी समाप्त हो जाती है।

कल ही रामू दादा अपने मृतप्राय हो गये जूते रखकर गये। हालत इतनी खराब है कि ऑपरेशन भी करता हूँ तो प्राणान्तकी सम्भावना है। मैंने तो दादासे कह दिया ऑपरेशन करना मेरा काम है। हालत इतनी खराब है कि अन्तमें तो पोस्टमार्टम-रिपोर्ट देखनेको मिलेगी।

डॉ० गुप्ताने रोहितके मुँहसे जब जूतोंके सम्बन्धमें यह चिकित्सकीय विश्लेषण सुना तो वे आश्चर्य करने लगे। मनोविश्लेषणके आधारपर सोचने लगे ‘कुछ तो है इस लड़केमें जो डॉक्टरी गुण-धर्मसे मेल खाता है।’ रोहितमें एक डॉक्टरकी सम्पूर्ण सम्भावनाएँ भरी पड़ी हैं। इसके भीतरका एक कुशल डॉक्टर बाहर आनेको बेताब है। उस डॉक्टरको बाहर निकालनेकी आवश्यकता है बस। यह एक उच्च कोटिका डॉक्टर बनकर चिकित्सा जगत्में अपना कीर्तिमान् स्थापित कर सकता है। इसकी अन्तर्निहित शक्ति तथा प्रतिभाको उजागर करनेकी आवश्यकता है। इसे थोड़ा सहारा चाहिये।

$\times$ 
 $\times$ 
 $\times$ 
 $\times$

डॉ० गुप्ताने रोहितको बारहवीं कक्षामें निवेदिताके स्कूलहीमें प्रवेश दिला दिया और कुछ समयके लिये विदेश-यात्रापर चले गये। मेहनत रंग लायी और रोहित जिलेमें सर्वाधिक अंक अर्जितकर जिला-स्तरपर सम्मानित हुआ।

इस कीर्तिमान्में निवेदिताका पूरा सहयोग रहा।



## संत-संस्मरण

( परमपूज्य देवाचार्य श्रीराजेन्द्रदासजी महाराजके गीताभवन, ऋषिकेशमें हुए प्रवचनसे साभार )

एक सज्जन सन्त-दर्शनहेतु वृन्दावन पधारे। एक सन्तके पास आकर उन्होंने जिज्ञासा की—महाराज, कुछ बताइये, जिससे हमारा कल्याण हो। प्रायः सन्त-महात्माओंके पास जाकर लोग इस प्रकारकी जिज्ञासा करते रहते हैं, यद्यपि उस विषयमें उनकी कोई गम्भीरता नहीं होती। महात्माजीका उत्तर था—‘जो जानते हो, उतना कर लो। तुम्हारे कल्याणके लिये उतना पर्याप्त है।’

वस्तुतः आत्मकल्याणके मार्गपर जानकारीका हमारे देशमें उतना अभाव नहीं है, जितना संकल्पपूर्वक जाने हुंको कार्यरूपमें परिणत करनेका है।

वृन्दावनकी कुटियामें एक अत्यन्त निरपेक्ष वृद्ध महात्मा निवास करते थे। उन्होंने कुछ पद्य-रचना की, जिसे भक्तमालीजी महाराजने पुस्तकरूपसे प्रकाशित करा दिया। पद्य मनोहारी थे, जिनसे आकर्षित होकर एक कुलीन संभ्रान्त महिला किसी महानगरसे एक दिन कुटीमें पधारीं। उन्होंने जिज्ञासावश उन पद्योंके कविसे मिलनेकी इच्छा प्रकट की। हमलोगोंने उन्हें महात्माजीके सम्मुख प्रस्तुत कर दिया। महिलाने फल-मिष्ठान्न आदि आस्थापूर्वक समर्पित करते हुए प्रणाम किया। महात्माजीने उस महिलासे पूछा कहाँसे आयी हो? उसने नगरका नाम बताकर यह भी कहा कि उसके परिवारमें कौन-कौन सदस्य हैं और स्वयं उसने विवाह नहीं किया। महात्माजी तत्काल बोल पड़े—मेरी अब विवाह करनेकी उम्र नहीं है। इस अप्रत्याशित उत्तरसे वह महिला अवाक् रह गयी और विचलित हुई। महात्माजीने कहा कि यह सब सामग्री वापस ले जाओ। वह अत्यन्त कुपित होकर सब सामान लेकर चली गयी।

हम विद्यार्थियोंने महाराजजीसे इस अप्रत्याशित व्यवहारका कारण पूछा और कठोरतापूर्वक फल आदि लौटानेकी शिकायत की। उन्होंने बताया कि ऐसा नहीं करनेपर उसका और कालक्रमसे अन्य महिलाओंका कुटियामें आवागमन बढ़ जाता, जो भजनमें विघ्नकारी

होता। अतः इस संकटका मूलोच्छेद कर दिया। हमने उत्सुकतावश आगे पूछा कि महाराज! अगर वह स्त्री पुनः आ गयी तो आप क्या करेंगे? वे बोले, उसे मारूँगा। हमने कहा कि वह फिर भी आ गयी तो? वे बोले, तब उसे कन्हैयासे मिलनेका मार्ग बता दूँगा। यह सन्त-स्वभाव होता है—‘वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।’

भक्तमालीजी महाराज सबमें भगवद्दर्शन करते थे, केवल चैतन्य जीवोंमें ही नहीं, जड़ पदार्थोंमें भी। प्रातः—से सायंकालतक कोई कभी पढ़ने आ जाय, उसे मना नहीं करते थे, कहते—तुम्हें जब फुरसत हो आ जाना। भोजनके बाद जो बर्तन चौकेमें तथा इधर-उधर बिखरे दीखें, उन सबको माँज-धोकर सजा दें। हमने पूछा, महाराज! आप ऐसा क्यों करते हैं? हम लोग बादमें कर ही देंगे। वे बोले, ये सब भगवत्पात्र हैं, जड़ पदार्थ समझकर इनके साथ उपेक्षापूर्ण व्यवहार उचित नहीं। ‘वासुदेवः सर्व’ केवल दूसरोंको बतानेके लिये है या स्वयंके लिये है?

महाराजजी प्रातःकालसे ही शरीर-क्रियासे निवृत्त होकर चौकेमें लग जायँ और आठ बजेतक चालीस-पचास लोगोंको रसोई पवा दें। गिरिराजजीका एक खण्ड-विग्रह कुटीमें बाहर रखा था, उसीको भोग लगाकर पंगत बैठा दें। कहते थे, ये ठाकुर बिना पर्दके भी भोग आरोगते हैं। एक दिन एक साधु महाराज भोग लगानेके पहले ही दाल-रोटी उठाकर चल दिये। हमें बुरा लगा और उन्हें टोका। उन्होंने गुस्सेसे सब दाल-रोटी नालीमें फेंक दी और चले गये। कुछ समय बाद महाराजजीने बुलाया और सारी बात पूछी। सब कुछ सुनकर बोले—दोष तुम्हारा है पण्डितजी! सब भगवत्स्वरूप हैं, पता नहीं किस रूपमें आ जायँ। ऐसी टोका-टाकी

## व्यक्तिका कल्याण और सुन्दर समाजका निर्माण

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

‘समाज क्या है? अनेक प्रकारकी भिन्नतामें एकता स्थापित करनेका जो परिणाम है, वही समाज है। मानव सामाजिक प्राणी है। व्यक्तिगत आवश्यकताओंकी पूर्तिके लिये समाजकी माँग होती है, कारण कि कोई भी व्यक्ति अपनी सारी आवश्यकताएँ अपने द्वारा पूरी नहीं कर सकता। इसके साथ-साथ यदि वह स्वयं दूसरोंकी आवश्यकतापूर्तिमें सहयोग नहीं देता, तब भी समाजका निर्माण नहीं होता। समाजका निर्माण एक-दूसरेकी आवश्यकतापूर्तिमें सहयोग देनेके लिये है। इस दृष्टिसे समाज मानव-जीवनका एक अनिवार्य अंग है और सुन्दर समाजके निर्माणका प्रश्न मानव-जीवनकी एक महत्वपूर्ण समस्या है।’

सुन्दर समाज कहते किसे हैं? इसका उत्तर निम्नलिखित व्याख्यानसे मिलता है—

‘सामाजिक विषमता और संघर्षको मिटाकर सुन्दर समाजके निर्माणका अर्थ यह लिया गया है कि जिस समाजमें प्रत्येक व्यक्ति कर्तव्यनिष्ठ हो जाता है, वह समाज सुन्दर हो जाता है, अर्थात् उस समाजमें सबके अधिकार सुरक्षित हो जाते हैं। जिस समाजमें किसीके अधिकारोंका अपहरण नहीं होता प्रत्युत सबके अधिकार सुरक्षित रहते हैं, वही सुन्दर समाज है।’

जब सुन्दर समाजका मूल है प्रत्येक व्यक्तिका कर्तव्यनिष्ठ होना, तो यह भाव व्यक्तियोंमें कैसे जाग्रत हो—इसका उपाय इस प्रकार बताया गया है—

ऐसी कर्तव्य-निष्ठाके लिये अन्तःप्रेरणाके रूपमें भौतिक दर्शनके सत्यको लिया गया। जगत्के नाते कोई गैर नहीं है। एक धरतीपर सबका आवास है, एक आकाशके नीचे सबका अवकाश तथा एक सूर्यके द्वारा सबको प्रकाश मिलता है, वायुके द्वारा सबको श्वास मिलती है और जलसे सबकी प्यास बुझती है। अतः सबके साथ सद्भाव रखना और निकटवर्तीको सहयोग

देना, मानवका निज कर्तव्य है। जैसे सुन्दर पुष्पोंसे वाटिकाकी शोभा होती है, वैसे ही कर्तव्यनिष्ठ व्यक्तियोंद्वारा सुन्दर समाजका निर्माण होता है।

इस दार्शनिक सत्यके साथ यह भी ध्यान देनेकी बात है कि मानव होनेके नाते हर व्यक्तिका स्वरूप ही है, सेवा, त्याग और प्रेम। सेवाके द्वारा ही व्यक्ति दूसरोंके लिये उपयोगी होता है। अतः—

‘व्यक्तिके कल्याण और सुन्दर समाजके निर्माणके लिये इस सत्यको स्वीकार करना अनिवार्य बताया गया है कि प्राप्त योग्यता, सामर्थ्य और वस्तु अपनी नहीं है, अपने लिये नहीं है। ऐसा जानकर समाजका प्रत्येक व्यक्ति जब प्राप्त बलको निर्बलोंकी धरोहर मानने लगता है और निर्मम, निष्काम होकर निर्बलोंकी सेवामें लग जाता है, तब समाजमें सबल एवं निर्बलकी एकता स्थापित होती है। उसीपर सामाजिक एकता (social integrity) टिक सकती है।’

यह प्रश्न स्वाभाविक है कि ऊपर वर्णित भाव मनुष्यमें आये कैसे? इसका समाधान नीचे प्रस्तुत है—

‘अधिकारोंकी माँगके लिये संगठित शक्तिका उपयोग हिंसात्मक प्रवृत्तियोंमें करना मानवता नहीं है। कर्तव्य-निष्ठा मानवता है, जिसमें अधिकार देना सहज स्वाभाविक है। ऐसी कर्तव्यनिष्ठा ऊपरी दबाव, शासन अथवा कानूनसे नहीं आ सकती। इसके लिये सामाजिक व्यक्तियोंको सत्संग करना चाहिये, जिसके प्रकाशमें व्यक्ति स्वेच्छासे कर्तव्यनिष्ठ अर्थात् धर्मपरायण हो सकता है। कर्तव्यनिष्ठा अधिकारोंकी जननी है। कर्तव्यनिष्ठ व्यक्तियोंके अधिकार स्वतः सुरक्षित हो जाते हैं और जिसमें सबके अधिकार सुरक्षित हो जायँ, वही सुन्दर समाज है।’ समाजके ही बलपर देश सुन्दर, समृद्धिशाली और शक्तिशाली बनता है।

[ ‘साधन-सूत्र’, प्रस्तुति—श्रीहरीमोहनजी ]

गोषु दत्तं न नश्यति

( पं० श्रीरामस्वरूपदासजी पाण्डेय )

देवकीनन्दन और रामनाथ दोनों बालसखा थे। बचपनमें विद्यार्थी-जीवनसे आजतक मित्रताका सहज निर्वाह होता रहा। रामनाथकी पुत्रियोंका जन्म हुआ उनका वे विवाह कर चुके थे। सर्वप्रथम एक पुत्रका जन्म हुआ था, पर वह अधिक नहीं जिया। वृद्धावस्थामें रामनाथकी सेवा करनेके लिये उनकी कोई-न-कोई लड़की यहाँ बनी रहती थी। पर विवाहके बाद बेटियोंपर उनके घरका भार आ जाता है, इसलिये वे अधिक समयतक नहीं रह सकतीं। रामनाथको गोपालनका व्यसन था। वे जीवनभर बड़े प्रेमसे गोसेवा करते रहे। अब वृद्धावस्था आ गयी, अतः उन्होंने अपनी अधिकांश गायें अपनी पुत्रियोंको दे दीं। बस, एक गाय रखी, जिसकी सेवा कर सकें। यह उनकी प्रिय गाय थी। खूब दूध देती। बहुत सीधी-साधी थी। अब वह भी वृद्ध हो गयी थी। शायद अन्तिम बार बछड़ा हुआ है। अब उन्हें सबसे अधिक चिन्ता इस गायकी सेवाकी थी।

रामनाथको मलेरिया बुखार हो गया। दवाके नामपर बार-बार कुनैन खानेसे अधिक गर्मी बढ़ गयी। अधिक गर्मीसे अनिद्रा हो गयी। गर्मीसे पीलिया हुआ और अब डॉक्टरने टाईफाइड बताया है। दो-तीन महीनेकी बीमारीसे उन्होंने खटिया पकड़ ली। देवकीनन्दनजी अपने मित्रसे मिलने प्रायः प्रतिदिन जाते। आज रामनाथजीने अपने मित्रसे कहा—‘भैया, अब मैं बचूँगा नहीं। अब मेरी दवा खानेकी इच्छा नहीं होती। अब तो बस एक ही दवा खानी है।’ ‘**औषधं जाह्नवीतोयं, वैद्यो नारायणो हरिः**’ ‘बस, एक ही इच्छा है, आप हमें गीताजी सुना दिया करें। देवकीनन्दनजीने सान्त्वना देते हुए अपने मित्रके विचारका समर्थन किया। वे रोज आकर उन्हें गीता सुनाने लगे। कुछ दिनोंमें गीताका पाठ पूरा हो गया। रामनाथने कहा—‘भैया, एक अभिलाषा और है। देवकीनन्दनने कहा—आप उसे निःसंकोच होकर प्रकट करें। मैं पूरी करनेकी कोशिश करूँगा। रामनाथने कहा—मैं गोदान करना चाहता हूँ, पर मेरे

पास अब इतना पैसा नहीं, जो खरीदकर अच्छी गाय दान कर सकूँ। मेरे पास जो गाय है, वह तो बूढ़ी है। शायद अन्तिम बार ब्यायी है। उसके बछड़ा है। उसे दानमें कौन लेगा? शास्त्रमें भी बूढ़ी गाय दान करनेका निषेध है। यह सोचकर हमारे हृदयमें संकोच है।

देवकीनन्दन अपने मित्रके हृदयके भावको समझ गये। उन्होंने कहा—मित्र, आप संकोच न करें, मैं गोदान ले लूँगा। रामनाथने भावमें भरकर अपने मित्रको गोदान कर दिया। वे गोदान लेकर घरको चले तो बूढ़ी गायको ले जाते देखकर गाँवके लोग आपसमें हँसी करने लगे—वाह, गजबके दाता, गजबके गृहीता, क्या कहना! घर आनेपर पत्नी और बच्चोंने भी विरोध प्रकट किया। लोग कहने लगे—देवकीनन्दनजी सठिया गये।

देवकीनन्दनजी गायकी सेवा स्वयं तत्परतासे करते। वे समझ रहे थे कि यह मात्र गोदान नहीं है। यह एक समस्याका समाधान है। मेरे मित्र रामनाथको चिन्ता थी कि मैं असमर्थ हूँ। अब मेरी गायकी सेवा कौन करेगा? बेटी, मेरी सेवा करनेको आयी है, पर अपने घर चली जायगी। अतः मैंने मित्रका कर्तव्य-पालन किया।

देवपुरमें सप्ताहमें मंगलवारको हाट-बाजार लगती है। उस दिन गाँवके कांजी हाउसमें पकड़े गये पशुओंकी जिनके मालिक छुड़ाने नहीं आते, उनकी नीलामी होती है। आज हाटमें एक बछड़ा नीलाम हो रहा है। वह बहुत समयसे कांजी हाउसमें बन्द रहनेसे अधिक कमजोर हो गया था। ठीकसे चल भी नहीं पा रहा था। उसकी कोई बोली नहीं लगा रहा था। देवकीनन्दनको उस बछड़ेपर दया आ गयी। उन्होंने बोली लगाकर उसे ले लिया। वे बछड़ा लेकर धीरे-धीरे अपने घर आ रहे हैं। गाँवके लोग उसे देखकर आज पुनः उनकी हँसी कर रहे थे। लगता है, बुढ़ापेमें देवकीनन्दनजीकी बुद्धि मारी गयी है। उनके घरके लोगोंको भी उनका यह काम अच्छा नहीं लगा। पर वे मौन रह गये। बस इतना कहा—इसकी सेवा कौन करेगा ? देवकीनन्दनजी स्वयं बछड़ेकी सेवा करने लगे।



रमेशको एक दिनमें हजार रुपयेतक मिल जाते। उसका मन प्रसन्न हो गया। उसने पिताजीके चरणोंमें प्रणामकर रुपये दिये। देवकीनन्दनने आशीर्वाद देकर कहा—बेटा, उस दिन तुम सब हमारी हँसी कर रहे थे। तुम दिल्ली जाकर क्या करते? यह बैलोंकी जोड़ी आज वरदान सिद्ध हुई। थोड़ी—सी पूँजीमें ही घर बैठे उद्योग मिल गया। कुछ दिनोंमें ही रमेशने मोटरसाइकिल खरीद ली। अब वह कामका निरीक्षण करता है। दो नौकर काम करते हैं। उसका अच्छे परिवारमें विवाह हो गया। अब धनका अभाव नहीं रहा। उसने आधी जमीनमें साग-सब्जी और गेहूँ बो दिया। जमीनके एक भागमें देवकीनन्दनजीने गोशाला स्थापित की है। उससे गाँवमें भटकनेवाली गायोंको आश्रय मिल गया। वे गोशालामें ही रहकर गोसेवा और भजन करते हैं और बहुत सुखी हैं।

## साधनोपयोगी पत्र

(१)

### परमार्थके साधन

प्रिय महोदय, सप्रेम हरिस्मरण। पत्र मिला। कुछ कारणोंसे उत्तर देनेमें विलम्ब हुआ है, कृपया क्षमा करेंगे। आपके प्रश्नोंका उत्तर इस प्रकार है—

१-भगवत्प्राप्तिका सबसे अच्छा उपाय है—भगवान्‌के प्रति प्रगाढ़ प्रेम, भगवान्‌से मिलनेकी प्रबल तीव्र उत्कण्ठा और भगवान्‌के विरहमें एक क्षण भी जीवनधारण असह्य हो जाना। वास्तवमें यह कोई साधन नहीं है, यह तो भगवद्विरहीका लक्षण है। करोड़ों वर्षोंकी तपस्याके मूल्यपर भी सच्चिदानन्दमय भगवान्‌के श्रीविग्रहकी क्षणिक झाँकीतक नहीं मिल सकती। कोई भी पुण्य, जप, तप, दान अथवा यज्ञ ऐसा नहीं है, जो भगवान्‌को दर्शन देनेके लिये विवश कर सके। भगवान्‌का दर्शन तो भगवान्‌की कृपासे ही होता है—‘**सोइ जानइ जेहि देहु जनाई**’ उनका दर्शन वही कर सकता है, जिसके सामने वे अपनी योगमायाका परदा हटाकर प्रकट हो जायँ। उनको कहींसे आना-जाना नहीं पड़ता। वे तो सदा और सर्वत्र विराजमान हैं; किंतु हैं योगमायासमावृत। जिसपर उनकी विशेष कृपा होती है, उसीको उनके दर्शनका सौभाग्य प्राप्त होता है। जिसे प्रभु देखते हैं कि यह मेरे दर्शनके बिना एक क्षण भी रह नहीं सकता, उसे अधिकारी मानकर तत्काल उसके सामने प्रकट हो जाते हैं। अतः उनका दर्शन कितने दिनोंमें होगा?—यह प्रश्न ही नहीं बन सकता। उनका दर्शन एक क्षणमें भी हो सकता है और कोटि-कोटि जन्मोंमें भी नहीं हो सकता। दर्शन तो उनकी दयासे ही होता है। हाँ, अपनेको प्रभुकी कृपाका पात्र बनानेके लिये योग्य साधन करते रहना मनुष्यका परम कर्तव्य है। उनमें निरन्तर प्रेम बढ़े, मिलनेकी तीव्रतम इच्छा जाग्रत् हो और एक क्षणका भी विरह असह्य हो जाय—ऐसी अवस्था अपने जीवनमें लानेकी चेष्टा करनी चाहिये।

२-३—अभी आपकी अवस्था नयी है, घरपर प्रभुसे भजन नहीं हो पाता, इसलिए आप घरसे

निकलकर वृन्दावनमें रहकर भजन करना चाहते हैं। भजनकी इच्छाका होना तो बहुत ही उत्तम है; किंतु आजकलके समयमें घर छोड़कर जानेकी सलाह तो मैं कभी नहीं दे सकता। घरमें जो घरका और दूकानका काम आपको करना पड़ता है, वह किसका काम है? क्या उसे आप भगवान्‌का काम नहीं समझते? क्या वह संसारका काम है? ऐसी भूल न कीजिये। घरके, आपके तथा सम्पूर्ण जगत्‌के सच्चे स्वामी भगवान् हैं। सब काम उन्हींका है। अतः उन्हींको स्वामी और अपनेको सेवक मानकर झूठ, कपट, चोरी आदि बुरी वृत्तियोंसे बचते हुए यदि घर और दूकानका काम सँभाला जाय तो यह भी भगवान्‌का भजन ही है। यही सर्वकर्मसे भगवान्‌की पूजा समझनी चाहिये। घरसे बाहर जानेपर भी आदमी प्रमादमें पड़कर साधनसे गिर जाता है। अभी आपको बाहरकी कठिनाइयोंका अनुभव नहीं है, अतः घरपर ही रहकर भजन-साधनका अभ्यास बढ़ाइये और भगवान्‌का काम समझकर घरके कामोंको भी उत्साहके साथ कीजिये।

४-सुनने और किताबोंको देखनेसे जो आपको मालूम हुआ कि किसी मन्दिरमें जाकर भगवान्‌के चरणोंमें गिर जाने और ‘जबतक भगवान् दर्शन न देंगे तबतक हम नहीं उठेंगे’—यह व्रत लेकर खाना-पीना छोड़कर पड़े रहनेसे भगवान् जल्दी दर्शन देते हैं। सो मेरी समझसे ऐसा करना कदापि युक्तियुक्त नहीं है। इसमें कई तरहके दोष आ सकते हैं। सबसे अच्छा उपाय तो है—प्रभुकृपाकी बाट जोहते हुए उनके लिये उत्कण्ठित रहना, अपनेको सर्वथा एकमात्र भगवान्‌की कृपापर छोड़ देना। फिर, भगवान् स्वयं ही अवसर देखकर हृदयसे लगा लेंगे। खान-पान छोड़नेमें महत्त्व नहीं है, महत्त्व तो भगवान्‌की अनिवार्य आवश्यकतामें और उनकी कृपापर अडिग विश्वास करनेमें है।

५-आपने अपने मनकी जो दशा लिखी है, वही प्रायः मनुष्यमात्रके मनकी स्थिति है। मन संसारमें अधिक रमता है और भगवान्‌में कम। उसे अधिकाधिक भगवान्‌की ओर लगानकी चेष्टा करना चाहिये। इस

कुकुलनादानीहीहै।

अव्यवस्थित मनको लेकर भगवान्‌के मन्दिरमें धरना देना तो बिलकुल नादानी ही है।

६-कलियुगमें अन्य युगोंकी अपेक्षा जल्दी और सुगम साधनसे ही भगवान्‌ दर्शन दे देते हैं, यह बात बिलकुल ठीक है। सत्ययुगमें हजारों वर्षोंतक ध्यान, त्रेतामें कितने ही वर्षोंतक यज्ञ तथा द्वापरमें सुदीर्घ कालतक पूजा-अर्चा करनेसे जो फल मिलता है, वह कलियुगमें केवल भगवान्‌के नामोंका कीर्तन करनेसे मिल जाता है। ( कलौ तद्धरिकीर्तनात् )

७-आपने यह ठीक ही सुना है कि पापी-से-पापी मनुष्य भी यदि भगवान्‌की शरणमें चला जाय तो उसे भगवान्‌ शीघ्र ही अपना लेते हैं। स्वयं भगवान्‌ गीतामें कहते हैं—

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।

साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः॥

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति।

(गीता ९।३०-३१)

अर्थात् 'कोई कितना ही बड़ा दुराचारी क्यों न हो, जो सबका भरोसा छोड़कर अनन्यभावसे मेरा भजन करने लगता है, वह साधु ही माननेयोग्य है; क्योंकि अब उसने उत्तम व्रत लिया है। वह शीघ्र ही धर्मात्मा हो जाता है और सनातन शान्तिको प्राप्त कर लेता है।' सनातन शान्तिका अर्थ है—भगवान्‌की प्राप्ति।

जो भगवान्‌की शरणमें जाता है, उसकी अहंता और ममताका त्याग हो जाता है। उसके लिये 'मैं' और 'मेरा' कुछ नहीं रहता। उसका 'मैं' पन और 'मेरा' पन सब कुछ भगवान्‌के चरणोंमें समर्पित हो जाता है। वह तो भगवान्‌के हाथका यन्त्र बन जाता है। भगवान्‌ जैसे रखें, रहना है; जो करायें, करना है। उसकी प्रत्येक चेष्टा भगवान्‌की प्रीतिके लिये होती है। अतः बुरे कर्मोंकी ओरसे उसकी प्रवृत्ति स्वाभाविक ही हट जाती है। उसे तो वे ही कर्म भाते हैं, जिनसे भगवान्‌को प्रसन्नता हो। सुख हो या दुःख, उसे भगवान्‌का प्रसाद मानकर वह सहर्ष शिरोधार्य करता है। उसे अपने लिये कोई चिन्ता नहीं होती है। वह तो अपनेको भगवान्‌की छत्रच्छायामें

डालकर पूर्णतः निश्चिन्त एवं निर्भय हो जाता है। उसे अपने मनका भान ही नहीं रहता। उसके मन, प्राण, शरीर, अन्तःकरण सबके लक्ष्य एक भगवान्‌ ही होते हैं। वह उन्हींको देखता, उन्हींकी बातें सुनता और उन्हींका निरन्तर चिन्तन करता हुआ मस्त रहता है। ऐसे शरणागत भक्तके योगक्षेमका भार स्वयं भगवान्‌ ही वहन करते हैं। यदि भगवान्‌की मधुर स्मृतिमें प्रेमावेश होनेपर उसे खाना-पीना भूल जाय तो उसको खिलाने-पिलानेकी चिन्ता भी भगवान्‌हीको करनी पड़ती है—

‘जिमि बालक राखड़ महतारी।’

(२)

### अष्टाक्षरमन्त्र-महिमा

प्रिय महोदय, सप्रेम हरिस्मरण! आपका एक पत्र प्राप्त हुआ। आप कल्याण नियमित पढ़ते हैं, यह बहुत अच्छी बात है। 'श्रीकृष्णः शरणं मम' इस अष्टाक्षर-मन्त्रका जप आप करते हैं। इस जपमें आपका मन तो लगता है, परंतु कुछ व्यवधानका भी अनुभव होता है। 'श्रीहरिः शरणम्' यह मन्त्र आपको ज्यादा अच्छा लगता है, इसे जपनेमें कोई आपत्तिकी बात नहीं है। दोनों मन्त्रोंके जपका एक ही फल है। आप चाहें तो सुविधानुसार एक-दो माला 'श्रीकृष्णः शरणं मम' मन्त्रकी भी जप सकते हैं तथा अधिक माला चलते-फिरते, खाते-पीते किसी भी समय 'श्रीहरिः शरणम्' मन्त्रका जप करना अच्छा है, कारण छोटे मन्त्रका जप सुविधापूर्वक हो जाता है और मन भी लगता है, अतः इसमें किसी प्रकारकी शंका नहीं रखनी चाहिये।

अष्टाक्षर-मन्त्रका अर्थ आपने पूछा, सो इसका अर्थ तो यही है कि एकमात्र भगवान्‌ श्रीकृष्ण ही मेरे शरण्य हैं। 'श्रीहरिः शरणम्' का अर्थ भी इसी प्रकार है—मैं भगवान्‌ श्रीहरिकी शरणमें हूँ अर्थात् एकमात्र हरि ही मेरे शरण्य हैं। अर्थानुसन्धानके साथ जपकी विशेष महिमा है। अतः यथासम्भव ध्यानावस्थामें परमात्मप्रभुके शरणागत होनेका यह अमोघ साधन है। भगवत्कृपासे और उनकी प्रेरणासे जीव उनके शरणागत हो जाय, यही इसका फल है। शेष प्रभुकृपा।

## व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७५, शक १९४०, सन् २०१८, सूर्य दक्षिणायन, शरद-ऋतु, कार्तिक कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वदि
प्रतिपदा रात्रिमें १०।० बजेतक	गुरु	अश्विनी दिनमें १०।४४ बजेतक	२५ अक्टू०	मूल दिनमें १०।४४ बजेतक।
द्वितीया " ९।११ बजेतक	शुक्र	भरणी " १०।४७ बजेतक	२६ "	वृषराशि दिनमें ४।४१ बजेसे।
तृतीया " ७।५८ बजेतक	शनि	कृत्तिका " १०।२३ बजेतक	२७ "	भद्रा दिनमें ८।३५ बजेसे रात्रिमें ७।५८ बजेतक, संकष्टी ( करवाचौथ ) श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ७।३७ बजे।
चतुर्थी " ६।२३ बजेतक	रवि	रोहिणी " ९।३८ बजेतक	२८ "	मिथुनराशि रात्रिमें ९।५ बजे।
पंचमी सायं ४।२६ बजेतक	सोम	मृगशिरा " ८।३१ बजेतक	२९ "	x x x
षष्ठी दिनमें २।१८ बजेतक	मंगल	आर्द्रा प्रातः ७।९ बजेतक	३० "	भद्रा दिनमें २।१८ बजेसे रात्रिमें १।८ बजेतक, कर्कराशि रात्रिमें ११।५८ बजेसे।
सप्तमी " १२।० बजेतक	बुध	पुष्य रात्रिमें ३।५७ बजेतक	३१ "	अहोईव्रत, मूल रात्रिमें ३।५७ बजेसे।
अष्टमी " ९।३६ बजेतक	गुरु	आश्लेषा " २।१५ बजेतक	१ नवम्बर	सिंहराशि रात्रिमें २।१५ बजेसे।
नवमी प्रातः ७।१३ बजेतक	शुक्र	मघा " १२।४४ बजेतक	२ "	भद्रा रात्रिमें ६।४ बजेसे रात्रिशेष ४।५४ बजेतक, मूल रात्रिमें १२।४४ बजेतक।
एकादशी रात्रिमें २।४७ बजेतक	शनि	पू०फा० " ११।११ बजेतक	३ "	कन्याराशि रात्रिमें ४।५२ बजेसे, रम्भा एकादशीव्रत ( स्मार्त्त )।
द्वादशी " १२।५१ बजेतक	रवि	उ०फा० " ९।५६ बजेतक	४ "	एकादशीव्रत ( वैष्णव ), गोवत्सद्वादशीव्रत।
त्रयोदशी " ११।१७ बजेतक	सोम	हस्त " ९।२ बजेतक	५ "	भद्रा रात्रिमें ११।१७ बजेसे, सोमप्रदोषव्रत, धनतेरस, धन्वन्तरि-जयन्ती।
चतुर्दशी " १०।६ बजेतक	मंगल	चित्रा " ८।२६ बजेतक	६ "	भद्रा दिनमें १०।४२ बजेसे, तुलाराशि दिनमें ८।४५ बजे, हनुमज्जयन्ती।
अमावस्या " ९।१९ बजेतक	बुध	स्वाती " ८।१६ बजेतक	७ "	अमावस्या, दीपावली।

सं० २०७५, शक १९४०, सन् २०१८, सूर्य दक्षिणायन, शरद-हेमन्त-ऋतु, कार्तिक शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदारत्रिमें ९।२ बजेतक	गुरु	विशाखा रात्रिमें ८।३६ बजेतक	८ नवम्बर	अन्नकूट, गोवर्धनपूजा, वृश्चिकराशि दिनमें २।३१ बजेसे।
द्वितीया " ९।१७ बजेतक	शुक्र	अनुराधा " ९।२५ बजेतक	९ "	गोवर्धनपूजा (काशीमें), भ्रातृद्वितीया, यमद्वितीया, मूल रात्रिमें ९।२५ बजेसे।
तृतीया " १०।४ बजेतक	शनि	ज्येष्ठा " १०।४५ बजेतक	१० "	धनुराशि रात्रिमें १०।४५ बजेसे।
चतुर्थी " ११।१७ बजेतक	रवि	मूल " १२।३२ बजेतक	११ "	भद्रा दिनमें १०।४१ बजेसे रात्रिमें ११।१७ बजेतक, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, मूल रात्रिमें १२।३२ बजेतक।
पंचमी " १२।५६ बजेतक	सोम	पू० षा० " २।४३ बजेतक	१२ "	x x x
षष्ठी " २।५५ बजेतक	मंगल	उ०षा रात्रिशेष ५।१० बजेतक	१३ "	श्रीसूर्यषष्ठीव्रत, मकरराशि दिनमें ९।२० बजेसे।
सप्तमी रात्रिशेष ५।२ बजेतक	बुध	श्रवण अहोरात्र	१४ "	भद्रा रात्रिशेष ५।२ बजेसे।
अष्टमी अहोरात्र	गुरु	श्रवण प्रातः ७।४७ बजेतक	१५ "	भद्रा रात्रिमें ६।६ बजेतक, कुम्भराशि रात्रिमें ९।४ बजेसे, पंचकारम्भ रात्रिमें ९।४ बजे, गोपाष्टमी।
अष्टमी प्रातः ७।१० बजेतक	शुक्र	धनिष्ठा दिनमें १०।२१ बजेतक	१६ "	अक्षयनवमी, वृश्चिक-संक्रान्ति रात्रिशेष ६।२१ बजे, हेमन्त-ऋतु प्रारम्भ।
नवमी दिनमें ९।७ बजेतक	शनि	शतभिषा " १२।४६ बजेतक	१७ "	x x x
दशमी " १०।४५ बजेतक	रवि	पू०भा० " १२।५० बजेतक	१८ "	भद्रा रात्रिमें ११।२० बजेसे, मीनराशि दिनमें ८।१९ बजेसे।
एकादशी " ११।५५ बजेतक	सोम	उ०भा० सायं ४।२८ बजेतक	१९ "	भद्रा दिनमें ११।५५ बजेतक, प्रबोधिनी एकादशीव्रत (सबका), तुलसी-विवाह, मूल सायं ४।२८ बजेसे।
द्वादशी " १२।४० बजेतक	मंगल	रेवती " ५।४० बजेतक	२० "	मेघराशि सायं ५।४० बजेसे, पंचक समाप्त सायं ५।४० बजे, भौमप्रदोषव्रत।
त्रयोदशी " १२।५२ बजेतक	बुध	अश्वनी रात्रिमें ६।३० बजेतक	२१ "	श्रीवैकुण्ठचतुर्थीव्रत, मूल रात्रिमें ६।२० बजेतक।
चतुर्दशी " १२।३५ बजेतक	गुरु	भरणी " ६।३२ बजेतक	२२ "	भद्रा दिनमें १२।३५ बजेसे रात्रिमें १२।११ बजेतक, वृषराशि रात्रिमें १२।२७ बजेसे, व्रत-पूर्णिमा।
पूर्णिमा " ११।४६ बजेतक	शुक्र	कृत्तिका " ६।१४ बजेतक	२३ "	कार्तिकी पूर्णिमा, श्रीगुरुनानक-जयन्ती, कार्तिकस्नान समाप्त।

## श्रीभगवन्नाम-जपकी शुभ सूचना

( इस जपकी अवधि कार्तिक पूर्णिमा, विक्रम-संवत् २०७४ से चैत्र पूर्णिमा, विक्रम-संवत् २०७५ तक रही है )

ते सभाग्या मनुष्येषु कृतार्था नृप निश्चितम् ।

स्मरन्ति ये स्मारयन्ति हरेर्नाम कलौ युगे ॥

‘राजन्! मनुष्योंमें वे लोग भाग्यवान् हैं तथा निश्चय ही कृतार्थ हो चुके हैं, जो इस कलियुगमें स्वयं श्रीहरिका नाम-स्मरण करते और दूसरोंसे नाम-स्मरण करवाते हैं।’

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥

—इस वर्ष भी इस षोडश नाम-महामन्त्रका जप पर्याप्त संख्यामें हुआ है। विवरण इस प्रकार है—

(क) मन्त्र-संख्या ८४,७१,७४,१०० (चौरासी करोड़, इकहत्तर लाख, चौंसठ हजार, एक सौ)।

(ख) नाम-संख्या १३,५५,४६,२५,६०० (तेरह अरब, पचपन करोड़, छियालीस लाख, पचीस हजार, छः सौ)।

(ग) षोडश नाम-महामन्त्रके अतिरिक्त अन्य मन्त्रोंका भी जप हुआ है।

(घ) बालक, युवक-वृद्ध, स्त्री-पुरुष, गरीब-अमीर, अपढ़ एवं विद्वान्—सभी तरहके लोगोंने उत्साहसे जपमें योग दिया है। भारतका शायद ही कोई ऐसा प्रदेश बचा हो, जहाँ जप न हुआ हो। भारतके अतिरिक्त बाहर फ्रामिंघम, मेलबोर्न, मिडिलटाउन, यू०के०, यू०एस०ए०, यूनाइटेड किंगडम, नेपाल आदिसे भी जप होनेकी सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं।

### स्थानोंके नाम—

अंजुरफरटा, अंता, अंधेरी, अंबाजोगाई, अंबाला कैट, अंबाला छावनी, अंबाला शहर, अर्की, अकोला, अगराना, अचरोल, अचानामुरली, अचारापुरा, अजनु, अजमेर, अजीतगढ़ अमरसर, अटरिया, अडावद, अतरौलिया, अनगाँव, अनघौरा, अनूपशहर, अमजदपुर, अमरावती, अमरावतीघाट, अमरोह, अमलनेर, अमाचन, अमिलिया, अमृतसर, अरइल अरड़का, अरनिया जोशी, अलकनन्दा, अलवर, अलीगढ़, अलीपुरकला, अल्मोड़ा, अवरीकला,

असगवाँ, असदपुर, असवार, अहमदाबाद, अहेरी, अहिरौली, आऊवा, आइसन, आगरा, आगवा, आङ्गरी-रोड, आडंड, आनन्दनगर, आबूरोड, आमगाँवबड़ा, आमळा, आरा, आर्वी, आला (ने०), आलेफाटा, आलोट, आष्टा, आसाङ्ग, इंदा, इन्दिरानगर, इंदौर, इचलकरंजी, इटावा, इटौरा, इन्दौली, इरांग पार्ट-१, इरांग पार्ट-२, इरेल भेली-१, इरेल भेली-२, इलाहाबाद, इसमैला, इसौली, ईरोड, ईसवाना, उखुल, उज्जैन, उतरौली, उदयपुर, उन्नाव, उमलवाड, उरतुम, उसनाकला, उस्मानाबाद, ऊना ऊसरी, ऋषिकेश, ऋषिनगर, ओडार सकरी, ओबरा, औरंगाबाद, कंचनपुर, कघारा, कछयाना, कछला, कछुआ, कछुई, कछेवारा, कजरहवाका पोखरा, कटक, कटका, कटनी कटरा, कठौतिया, कड़ीला, कथैया, कनखल, कनैड, कनौसी, कन्नौज, कन्दरीडी, कपारी, कमलपुर, करनाल, करही (शुक्ल), करब गाँव, करीमुद्दीनपुर, करैयाजागीर, करौदी, करौली, कर्णपुर, कर्मचारीनगर, कल्याण (वेस्ट), कसारीडीह, कहली खुरद, काँगड़ा, काँगलातोम्बी, काँपोक्मी, कांदुला, काछीगुड़ा, काठिया, कादरगंज, कानपुर, कान्दीवली, कामता (फारविसगंज), कालका, कालपी, कालाडेरा, कालापहाड़, कालियागंज, कालीकट, कालूखाँड़, काशीपुर, किमसी, किला, किरारी, किस्मीदेसर, कुंदल, कुचामनसिटी, कुरमापाली, कुरुक्षेत्र, कुलमीपुर, कुशालपुरा, कुसुमसरोवर, कृष्णनगर, केंकरा, कैथल, कैथापकड़ी, कोंच, कोईरागै, कोईलारी, कोकलकचक, कोटद्वार, कोटड़ा, कोटा, कोठार, कोठी, कोठेयाँ, कोडरा, कोड़लहिया, कोथराखुर्द, कोबुलैखा, कोरकपुरा, कोरबा, कोरापुट, कोलकाता, कोलहरा, कोलिया, कोलीढेक, कोसीकला, कोहका, कौड़िया, कौड़ीहार, कौबुलेखा, कौहाकुड़ा, कौलती (नेपाल), कोरकपुरा, कौवाताल, खंडवा, खंजरपुर, खगड़िया, खजरेट, खजुरीरुण्डा, खजूरी, खडगवाँकला, खन्ना, खरखो, खरगोन, खराड़ी, खाखोली, खानपुर फतेह, खामगाँव, खिंचलाय, खुटनिया, खुटपला, खुरपावड़ा,

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

खेरोट, खेलदेश पाण्डेय, खैराचातर, खैराबाद, गंगापुर  
सिटी, गंगाशहर, गंजपारा, गंजवसौदा, गजरौला, गड़कोट,  
गढ़पुरा, गढ़बसई, गढ़ेरी, गणेती, गणेशपुर, गदरपुर,  
गनेड़ी, गम्हरिया, गया, गरौठा, गहमर, गाँधीनगर,  
गाजियाबाद, गाजीपुर, गाड़वारा, गाड़ीपुरा, गिरिडीह,  
गीर, गुंडरदेही, गुड़गाँव, गुड़ाकला, गुना, गुजरात  
गुरुग्राम, गुरुदासपुर, गुलबर्गी, गुवाहाटी, गोंडा, गोकुलेश्वर,  
गोपालगंज, गोपालगढ़, गोपिबुंग, गोपियापारा, गोरखपुर,  
गोलप, गोलाबाजार, गोवाडीहा, गौँछेड़ा, गौड़ीहाट,  
गौरिया वरारी, ग्वालियर, घगोंट, घघरा, घुघली, घरिया,  
घरवार, घरैहली, घाटासेर, धिंचलाय, धुंसी, चंगोई,  
चंडीगढ़, चन्द्रनगर, चंदला, चंदौली, चकलोकमान,  
चक्कीरामपुर, चतुरताई, चपकीबघार, चम्पाघाट, चम्बा,  
चरघरा, चरघटा, चाँडेल, चाचौड़ा, चारहजारे, चिखलाकला,  
चिचोली, चिलौली, चीनपुर, चुड़ाचाँदपुर, चुरू, चेन्नई,  
चैतड़, चोरबड़, चोपड़ा, चौखा, चौखुटिया, चौन्तला,  
चौमहला, चौरास, चौसलाकुलंबी, चौहटन, छत्ता, छपरा,  
छपिया, छाजाका नागल, छातागुड़ा, छोटालम्बा,  
जंगबहादुरगंज, जंघोरा, जंडियालगुरु, जगदलपुर,  
जगन्नाथपुरी, जगवन, जगदीशपुरा, जगाधरी, जगेश्वर,  
जट्टारी, जत, जतापुर, जनौरा, जबलपुर, जमानी,  
जमुआव, जमुड़ी, जयनारायण (व्यासनगर), जयपुर,  
जरुड़, जलगाँव, जलहरकुकुरमूड़ा, जलोदाखाटयान,  
जसपुरखुर्द, जसो, जसवंतढ़, जहाँगीराबाद, जहाजपुर,  
जॉजगीर, जाकरपुरा, जाखलदाधीच, जाखड़वल्ली, जाजोद,  
जानडोल, जामपाली, जालन्धर, जालना, जिहुली, जुगसलाई,  
जुलगॉव (नेपाल), जेमीस्थानपुर जेरई, जैतारन, जैतो,  
जैपुर, जैपोर, जैलिधार, जैसलमेर, जोधपुर, जोरहाट,  
जोस्यूड़, जौनायंचाकला, जौलजीवी, झहुराटभका, झाँसी,  
झापा, झुट्टा, झुन्झुनू, झूँसी, झूलाघाट, टटेड़ा, टाँगीणीगुड़ा,  
टीकमगढ़, टूंगरी, टोरड़ा, टोंकखुर्द, ठकुरापर, ठकठौलिया,  
ठाँ, ठाँठाणी, ठाणे, ठारी, ठीकरिया, ठुटी, ठेहट,  
डंडापुरा, डकोर, डडिहथ, डबरा, डबोक, डबारो,  
डाँगावास, डाल्टनगंज, डिग्गी, डीग, डीडवाना, डुगली,  
डुमकाट, डुडरवा, डूरेनह, डूकमोलोहरी, डूकमोलोहरी,

ढाना, ढेगडीह, तरकेडी, तरखाऊ, तरखानवाला, तर्भी, ताक्या, तामली, तिंवरमोड़, तिसपरी तिमसिन, तेल्हारा, तीनफेड़िया, तोक्या, तोला, तोरीबारी, तेलांगाना, थाणा, थाणे, थुलवासा, दडीबा, दतिया, दत्तनगर, दन्ततोड़िया, दत्यारसुनी, दमोह, दरौना, दलसिंहसराय, दहमी, दहिवद, दातामुरा, दातारामगढ़, दामनजोड़ी, दामोदरपुर, दारानगर, दिगौड़ा, दिल्ली, दुमका, दुर्ग, दुर्गानगर, देईखेड़ा, देचू, देवखैरा, देवनगर, देवरीकलां, देवास, देशनोक, देहरागोपीपुर, देहरादून, देहली, दौलतगढ़, दौलतपुरचौक, द्वारका, द्वारिकेशनगर, धनबाद, धनौरा, धरमगढ़, धर्मपुरा, धर्मावाद, धानीखेड़ा, धार, धाँगधा, धाली, नदियामी, नन्हवाराकला, नबाबगंज, नयापुरवा, नयाबाजार, नयीदिल्ली, नरहवा अचरजदूबे, नांदन, नागलोई, नागपुर, नागौर, नाचनी, नाढ़ी, नाभा, नादकंडा, नारायणपुर, नावन, नासिक, नाहली, निडाना, निधिपुरवा, निपनिया, निफाड़, निमाज, नीमच, नैनपुर, नैनवा, नोएडा, नोखा, नोनापुर, नोनीहाट, नोनैती, नौगाँव, न्यू माधोपुर, न्यू शिमला, पंचकूला, पंचशीलनगर, पंडेर, पटना, पटनासिटी, पटियाला, पट्टी, पट्टीचौरा, पगा, पड़ग, पतारी, पताल घुटकुरी, पत्थरकोट (नेपाल), पत्योरा, पद्मनाभ नगर, पपरौला, परलीबैजनाथ, परसापाली परसिया, परेख, पलेई, पार्टई, पाटल, पाड़रियाडाँडा, पालनपुर, पाला, पाली, पालीमारवाड़, पाहल, पिजड़ा, पिछोर, पिठौरागढ़, पिपरिया, पिपलगाँव वसन्त, पिलखुवा, पीठीपट्टी, पीपलरावा, पीलीभीत, पुखाऊ, पुणे, पुनासा, पुपरी, पुरुणावान्श्रागोडा, पुरेना, पूर्निया, पेडोंग, पोटली, पोटसो, पोलय, पोरबन्दर, पौना, प्राचीन टिकैतगंज, प्रतापनगर, फतेहपुर, फरीदाबाद, फागी, फाजिलनगर, फिरोजपुर, फीला, फुलेरा, फूलपुरामा, फूलबेहड़, फैजलनग, फैजाबाद, फ्रामिंधम, बंगलौर, बंबई, बमुरैया, बसई, बघेरा, बढह, बड़कागाँव, बड़गाँव, बड़खेरवा, बड़ायाँव, बड़लू, बड़ा खलौं, बड़ौत, बदनसैगाई, बनमोर, बनवारीबसंत, बनेड़िया, बनैल, बन्नी, बभनान, बमोरा, बमनियाकला, बरखेड़ा पठानी, बरड़ा, बरमकेला, बरवाडीह, बर्ली, बरेली, बरीपुरा, बरोरी, बरोहा, बलरामपुर, बलिगाँव, बलिया, बसई, बसन्तपुरखुद, बसदेहड़ा, बसाध, बारास,

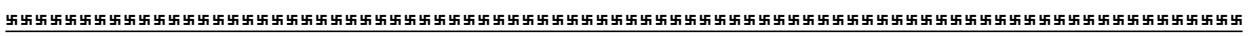
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

बाँदनवाड़ा, बाँघ्राबाजार, बड़ापारा, बाँसवाड़ा, बाँसाकला,  
बागपत, बागबहरा, बाछौर, बामनखेड़ा, बायतु, बारा,  
बाराकला, बालाघाट, बलांगीर, बाराकोट (नेपाल)  
बारीकेल, बावल, बिगहिया, बिछैलखा, बिजबासन,  
बिटोरा, बिदराली, बिरहाकन्हई, बिलारी, बिलवई, बिलासपुर,  
बीकानेर, बीड़काखेड़ा, बीनागंज, बीसापुरकंला, बुलन्दशहर,  
बुल्ढाणा, बेगूँ, बेगूसराय, बेरछामंडी, बेलमपल्ली, बेरहामपुर,  
बेरावल, बेलड़ा, बेलसोन्डा, बेलासदी, बेलोना, बैतूल,  
बैला, बोकारो, बोरनार, बोरावड़ बेहरीवली, ब्यौही,  
ब्रह्मपुर, ब्रह्मावल्ली, भटगाँव, भटवलिया, भटिण्डा, भट्ट,  
भनसुली, भयन्दर, भरतपुर, भरथना, भरसी, भरुच,  
भलस्वाईसापुर, भवानी, भवानीपुर, भागलपुर, भाड़लू,  
भाणुजा, भादरा, भादवारी, भारतनगर, भिण्ड, भिण्डुवा,  
भिलाई, भिवण्डी, भिवानी, भीकनगाँव, भीकमगाँव,  
भीखनपुर, भीनासर, भीमदासपुर, भीलवाड़ा, भुवनेश्वर,  
भुज, भुसावर, भुसावल, भूरेवाला, भेडवन, भैंसड़ा,  
भैंसलाना, भोकरदन, भोगपुर, भोजपुर, भोपाल, भोरड़ा,  
भ्रमरपुर, मंडा, मंदसौर, मंत्रिपुख, मंडी, मऊगंज, मकेंग,  
मगतादीस, मगहर, मथुरा, मदाना, मधुबन, मधुबनी,  
मनकापुर, मनचंगवा, मलँगवा (नेपाल), मलौंड, मलेनपुरवा,  
महका, महमदा, महाराजगंज, महरौनी, महल, महादेवा,  
महासमुन्द, महेशाणा, महेश्वर, मांडल, माओहिंग, माचलपुर,  
माजिरकाडा, माडलगढ़, माड़ीपुर, माधोपुर, मानधाता,  
मानेडाडा, मायानगरी, मालाखेड़ी, मालेगाँव, मावली,  
मिझौरा, मिर्जापुर, मिश्रपुर, मीतली, मीरारोड, मुँगेली,  
मुंगेर मुंडरु, मुंदी, मुम्बई, मुजफ्फरनगर, मुजफ्फरपुर,  
मुरदाकिया, मुरमूनी, मुरलीधर, मुरादाबाद, मुरैना, मुलड,  
मुलताई, मुलुण्ड, मुस्तफाबाद, मूडियायमला, मूडी, मेंड़ई,  
मेंडी, मेंहदीपुर, मेघौना, मेड़तारोड, मेड़तासिटी, मेरठ,  
मेवासा, मेवड़ा, मोटबुंग, मोतियाडुमरिया, मोरीजा, मोलकोन,  
मोहबा, मौआरी, यमुनानगर, यवतमाल, रंगिया, रघुनाथपुर,  
रजीपुरा, रठेरा, रतनपुर, रतनमहका, रतलाम, रन्नी,  
रन्नौद, रमपुर, ररी, रसूलपुर, रसूलिया, रहली, राँई, राँची,  
राऊ, राऊकेला, राजकोट, राजपुर, राजरूपपुर, राजाआहर,

राजानगर, रानीकटरा, रामगढ़, रामनगर, रामपुर, रामपुरखेड़ी, रामपुरी, रामेश्वरकम्पा, रामेश्वरम्, रायगढ़, रायचूर, रायपुर, रायपुरशिवाला, रायबरेली, रायला, रियाबड़ी, रुड़की, रुदौली, रेवड़ापुर रेहलू, रोहतक, रोहतास, रोहनी, लक्ष्मणगढ़, लक्ष्मीनगर, लखनऊ, लखनादौन, लखीमपुर खीरी, लखीबाग, लखूरियागौरी, लठिया, लरछुट, ललितपुर, लशकर, लाडपुरा, लाडवा, लामिया, लालपुर, लावन, लाहरखेड़ा, लिलुआ, लुंगफौ, लुधियाना, लोनी, लोसिंहा, लोहारा, लैमाखोंग, वरगदही बसंत, वर्धा, बसाँव, वल्लभनगर, वानासद्दी, वापी, वाराणसी, विजयनगर, विपरी, विलासपुर, विशाखापट्टनम, विशाड़, विशुनपुरवा, वेरावल, वैर, वोधन, वोरावल, व्यावर, शमीरपुर, शहुरी फैक्ट्री, शांतिपुर शांतिपुरी, शाजापुर, शाहकोट, शाहजहाँपुर, शाहपुर, शिंदखेड़ा, शिमला, शिवली, शिवसागर, शेखपुर, शोखावाटी, शेगाँव, श्रीगंगानगर, शेखावाटी, संदणा, संगनेश्वरनगर, संगवली, संघर, संतोलावारी, संतोषपुरम्, सकरी, सतगढ़, सतना, सत्संगनिकुंज, समैसा, सपलड, सपिया, सम्फेजुंग, सरदारशहर, सरथुआ, सरदमपिंडारा, सरयाँस, सरवनियाँ सरायकाइयाँ, सरैयाप्रवेशपुर, सरोजनीनगर, सवाईमाधोपुर, ससना, सहरसा, सहार, सहारनपुर, सांगटी, सागर, सादाबाद, सानणपण्डितान, सापूल्ली, सारंगपुर, सायेयाद, साहवा, साहिवावाद, साहू, सिंगापुर, सिलीगुड़ी, सिंगहायसुफपुर, सिकरी, सिकहुला, सिन्दगाँव, सिरपुर कागजनगर, सिरोही, सीतामढी, सीथल, सिवाना, सिवनी, सीहोर, सींगपुरा, सीकर, सीतापुर, सी०पी०रेंक, सुन्दरवाला, सुखलिया, सुगवा, सुजानगढ़, सुजानदेसर, सुधारबाजार, सुपौल, सुरनगर, सुल्तानपुर, सूरत, सेतीखोला सेनापति, सेमरा, सेमराबाजार, सेंठा, सेरो, सोडाला, सोनखर, सोनपुरी, सोनभद्र, सोमनाथ, सोनीपत, हटनी, हटवा, हतीसा, हथियापौर, हरदा, हरदोई, हराबाग, हरिद्वार, हल्द्वानी, हरिहरपुर, हल्दौर, हसनपालीया, हसनपुर, हाटकोटी, हातिखुआ, हातीबेरिया, हाबड़ा, हारमा, हिरणमगरी, हिरी, हिसार, हिगोलाकला, हुमरस, हुबली, हुमायूँपुर, हैदराबाद, होशांगाबाद ।



भगवान्‌के प्रभावशाली नामका जप स्त्री-पुरुष, ब्राह्मण-शूद्र सभी कर सकते हैं। इसलिये 'कल्याण' के भगवद्विश्वासी पाठक-पाठिकाओंसे हाथ जोड़कर विनयपूर्वक प्रार्थना की जाती है कि वे कृपापूर्वक सबके परम कल्याणकी भावनासे स्वयं अधिक-से-अधिक जप करें और प्रेमके



साथ विशेष चेष्टा करके दूसरोंसे भी जप करवायें। नियमादि सदाकी भाँति ही हैं।

(१) जप प्रारम्भ करनेकी तिथि कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा (दिनांक २३।११।२०१८ ई०) शुक्रवार रखी गयी है। इसके बाद किसी भी तिथिसे जप आरम्भ कर सकते हैं, परंतु उसकी पूर्ति चैत्र शुक्ल पूर्णिमा, वि० सं० २०७६ दिन-शुक्रवार (दिनांक १९।४।२०१९)-को कर देनी चाहिये। इसके आगे भी अधिक जप किया जाय तो और उत्तम है।

(२) सभी वर्णों, सभी जातियों और सभी आश्रमोंके नर-नारी, बालक-वृद्ध, युवा इस मन्त्रका जप कर सकते हैं।

(३) एक व्यक्तिको प्रतिदिन उपरिनिर्दिष्ट मन्त्रका कम-से-कम १०८ बार (एक माला) जप अवश्य ही करना चाहिये, अधिक तो कितना भी किया जा सकता है।

(४) संख्याकी गिनती किसी भी प्रकारकी मालासे अथवा अंगुलियोंपर या किसी अन्य प्रकारसे भी रखी जा सकती है। तुलसीजीकी माला उत्तम होगी।

(५) यह आवश्यक नहीं है कि अमुक समय आसनपर बैठकर ही जप किया जाय। प्रातःकाल उठनेके समयसे लेकर चलते-फिरते, उठते-बैठते और काम करते हुए सब समय—सोनेके समयतक इस मन्त्रका जप किया जा सकता है।

(६) बीमारी या अन्य किसी कारणवश जप न हो सके और क्रम टूटने लगे तो किसी दूसरे सज्जनसे जप करवा लेना चाहिये। पर यदि ऐसा न हो सके तो बादमें अधिक जप करके उस कमीको पूरा कर लेना चाहिये।

(७) संख्या मन्त्रकी होनी चाहिये, नामकी नहीं; उदाहरणके रूपमें—

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।  
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥  
—सोलह नामके इस मन्त्रकी एक माला प्रतिदिन जपें

तो उसके प्रति मन्त्र-जपकी संख्या १०८ होती है, जिसमें भूल-चूकके लिये ८ मन्त्र बाद कर देनेपर गिनतीके लिये एक सौ मन्त्र रह जाते हैं। अतएव जिस दिन जो भाई-बहन मन्त्र-जप आरम्भ करें, उस दिनसे चैत्र शुक्ल पूर्णिमातकके मन्त्रोंका हिसाब इसी क्रमसे जोड़कर हमें अन्तमें सूचित करें। सूचना भेजनेवाले सज्जनोंको जपकी संख्याके साथ अपना नाम-पता, मोबाइल नम्बर स्पष्ट अक्षरोंमें लिखना चाहिये।

(८) प्रथम सूचना तो मन्त्र-जप प्रारम्भ करनेपर भेजी जाय, जिसमें चैत्र पूर्णिमातक जितनी जप-संख्याका संकल्प किया हो, उसका उल्लेख रहे और दूसरी बार जप आरम्भ करनेकी तिथिसे लेकर चैत्र पूर्णिमातक हुए कुल जपकी संख्या उल्लिखित हो।

(९) प्रथम सूचना प्राप्त होनेपर जपकर्ताको सदस्यता दी जाती है। द्वितीय सूचना भेजते समय सदस्य-संख्या अवश्य लिखनी चाहिये।

(१०) जप करनेवाले सज्जनको सूचना भेजने-भिजवानेमें इस बातका संकोच नहीं करना चाहिये कि जपकी संख्या प्रकट करनेसे उसका प्रभाव नष्ट हो जायगा। स्मरण रहे, ऐसे सामूहिक अनुष्ठान परस्पर उत्साहवृद्धिमें सहायक होकर प्रभावक बनते हैं।

(११) जापक महानुभावोंको प्रतिवर्ष श्रीभगवन्नाम-जपकी सूचना अवश्य दे देनी चाहिये।

(१२) सूचना संस्कृत, हिन्दी, मराठी, मारवाड़ी, गुजराती, बँगला, अंग्रेजी, उर्दूमें भेजी जा सकती है।

सूचना भेजनेका पता—  
नामजप-कार्यालय, द्वारा—‘कल्याण’ सम्पादकीय विभाग,  
गीताप्रेस, पो०—गीताप्रेस—२७३००५ (गोरखपुर)

प्रार्थी—  
**राधेश्याम खेमका**  
सम्पादक—‘कल्याण’

राम जपु, राम जपु, राम जपु बावरे । घोर भव-नीर-निधि नाम निज नाव रे॥  
एक ही साधन सब रिद्धि-सिद्धि साधि रे । ग्रसे कलि-रोग जोग-संजम-समाधि रे॥  
भलो जो है, पोच जो है, दाहिनो जो, बाम रे । राम-नाम ही सों अंत सब ही को काम रे॥  
जग नभ-बाटिका रही है फलि फूलि रे । धुवाँ कैसे धौरहर देखि तू न भूलि रे॥  
राम-नाम छाड़ि जो भरोसो करै और रे । तुलसी परोसो त्यागि माँगै कूर कौर रे॥ [विनय-पत्रिका]

श्रीभगवन्नाम-जपके जापक महानुभावोंको अपनी स्थायी सदस्य-संख्या एवं नाम-पता ( मोबाइल नम्बरसहित ) साफ-साफ अक्षरोंमें लिखना चाहिये, जिससे उनके ग्राम/नगरका शुद्ध नाम दिया जा सके।  
—सम्पादक

कृपानुभूति  
भगवान् श्रीकृष्णकी कृपा

यह सच्ची घटना वर्ष २०१३ माह जूनकी है, मुझे परमात्मा परमेश्वर श्रीकृष्णकी साक्षात् कृपाका अनुभव हुआ है। भगवान् जब अपने भक्तपर किसी प्रकारका कोई विषम संकट आता है तो वे किस प्रकार निराकरण करते हैं, यह भक्तको बादमें अनुभव होता है। सन् २०१३ के मईके महीनेमें मैंने परिवारसहित गंगोत्री तथा यमुनोत्री जानेकी योजना बनायी। मैं धार्मिक यात्राएँ करता रहता हूँ और प्रायः हरिद्वार जाता रहता हूँ, इसी क्रममें इस बार घटित हुई घटनाका विवरण इस प्रकार है—

मैं चीफ फार्मेसिस्टके पदपर १५ वीं वाहिनी पी०ए०सी० चिकित्सालयमें कार्यरत हूँ। दिनांक ७ जून २०१३ को मुझे विभागकी ओरसे एक आदेश प्राप्त हुआ कि 'आपका स्थानान्तरण मुख्य चिकित्सा-अधिकारी हाथरसके अधीन किया जाता है।' स्थानान्तरण-आदेशको पानेके बाद मैंने धार्मिक यात्राका कार्यक्रम रद्द कर दिया। यह स्थानान्तरण नीतिके तहत गलत हुआ था। मैंने स्थानान्तरण-आदेशको निरस्त करानेकी प्रक्रिया आरम्भ कर दी। स्थानीय चिकित्सा-अधिकारियोंसे प्रार्थना-पत्र तैयार कराकर मैं अपने महानिदेशक कार्यालय, लखनऊ पहुँचा। वहाँपर निदेशक महोदयके समक्ष उपस्थित होकर अपने गलत हुए स्थानान्तरणको निरस्त करनेके सम्बन्धमें प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया। निदेशक महोदयने प्रार्थना-पत्र पढ़कर जाँच कराकर आदेशको निरस्त करानेके लिये सम्बन्धित लिपिक महोदयको निर्देशित कर दिया। सम्बन्धित बाबूने आदेशको निरस्त करनेके लिये ३०,००० रुपयेकी माँग की। मैंने रुपये देनेसे मना कर दिया तथा कहा—मेरा स्थानान्तरण गलत हुआ है। मैं अब उच्च अधिकारियोंसे मिलूँगा, इतना कहकर मैं वापस आगरा आ गया और आदेशका इंतजार करने लगा।

केदारनाथ, उत्तरकाशी तथा गंगोत्री, यमुनोत्रीमें भीषण बारिश होनेके कारण भयंकर तबाही हुई, जिसमें बहुत सारे मकान, सड़क, यात्रीगण बह गये और लोग जहाँ-तहाँ फँस गये। कई-कई दिनोंतक लोगोंको भूखे रहना पड़ा तब हमने सोचा कि इस स्थानान्तरणने हमको भयंकर तबाहीसे बचा दिया। यह तबाही खत्म होनेके कुछ दिनोंके बाद पोस्टमैन एक रजिस्टर्ड डाक घर लेकर आया। मैंने उस रजिस्ट्रीको खोलकर देखा कि उसमें मेरे स्थानान्तरणको निरस्त करनेका आदेश था। मुझे प्रसन्नता हुई कि बिना रुपये लगे स्थानान्तरण निरस्त हो गया, अन्यथा मेरे लगभग ५०,००० रुपये खर्च होते। यह घटनाक्रम गुजरनेके एक माह बाद मैं एक बार गीताका पाठ कर रहा था तो अचानक वह वर्णन मिला कि भगवान् श्रीकृष्ण अपने भक्तोंके कष्टको सहन नहीं कर सकते। वे किसी-न-किसी रूपमें भक्तको संकटसे उबार देते हैं। अब मुझे वास्तविक रूपसे भगवान्की कृपाका अनुभव हुआ कि मेरी रक्षा भगवान् श्रीकृष्णने स्वयं की है; क्योंकि धार्मिक आस्था होनेके कारण मैं बदरीनाथ, केदारनाथ, उत्तरकाशी, गंगोत्री एवं यमुनोत्रीकी यात्रापर सपरिवार जाता और बाढ़की विभीषिकामें फँस जाता, परंतु प्रभुकी कृपासे उसी समय मेरे स्थानान्तरणका गलतीसे आदेश आ गया, जिससे मैं उक्त यात्रापर न जा सका। यदि क्लर्कने स्थानान्तरण निरस्तीकरणके पैसे न माँगे होते और निरस्तीकरण हो जाता तो मैं पुनः उपर्युक्त यात्रापर चला जाता, अतः उसमें भी मुझे प्रभुकी ही लीला लगती है, उन्हें मेरी रक्षा जो करनी थी।

इन तीन घटनाओंसे स्पष्ट है कि परमात्मा परमेश्वर अपने भक्तोंपर दया करते हैं। मैंने तथा मेरे परिवारने इस घटनाके माध्यमसे उनकी कृपाका अनुभव कर लिया। मैं

# पढ़ो, समझो और करो

(१)

## सफाई ही खुदाई है

एक बार खन्ना (पंजाब)–में सिद्ध सन्त स्वामी त्रिवेणीपुरीजीने एक भव्य धार्मिक समारोहका आयोजन किया। विख्यात सन्त श्रीहरिबाबा एवं स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती आदि भी समारोहमें पधारे। श्रीहरिबाबाने देखा कि संकीर्तन-स्थलके आसपास गन्दगी व्याप्त है। उन्होंने तुरन्त हाथमें फावड़ा लिया और सफाईमें जुट गये। उन्हें सफाई करते देखकर एक रियासतके राजा श्रीबहादुरसिंह तथा पंडित छविकृष्ण दीक्षित भी झाड़ूसे सफाई करने लगे। स्वामी त्रिवेणीपुरीजीको जब यह पता चला तो वे भागे-भागे वहाँ पहुँचे तथा हाथ जोड़कर बोले, ‘बाबा, आप यह क्या कर रहे हैं ? मैं सफाईकर्मियोंसे यह काम कराये देता हूँ।’

श्रीहरिबाबा बोले, 'महाराज, यदि हम अपने हाथोंसे सफाई करनेमें हिचकेंगे तो भगवान् हमारे दिलोंमें झाड़ू क्यों लगायेंगे ? यह समझ लेना चाहिये कि सफाई ही खुदाई है।' बाबाके इन शब्दोंको सुनकर सभी उपस्थित जनोंने अपने-अपने हाथोंसे सफाई करनेका संकल्प किया।—शिवकुमार गोयल

(२)

## वैदिक मन्त्रोंके उच्चारणसे

## स्मरणशक्तिमें अभिवृद्धि

भारतीय मान्यताके अनुसार वैदिक मन्त्रोंके सस्वर उच्चारण करने एवं उन्हें कण्ठस्थ करनेसे स्मरण-शक्ति, विचारशीलता तथा ज्ञान (Cognition)-में अभिवृद्धि होती है। अधिकांशतः आधुनिक विद्वान् इसे एक विश्वासमात्र ही मानते थे, परंतु न्यूरो साइंटिस्ट डॉ॰ जेम्स हार्टजेल (Neuro Scientist Dr. James Hartzell)-ने विभिन्न प्रयोगोंद्वारा शोधकर इस विचारधाराकी सत्यताको सिद्ध किया है।

डॉ० हाटजेलेने इटलीकी ट्रेन्टो यूनिवर्सिटी (University of Trento, Italy)–के अपने मित्र तथा भारतस्थित

नेशनल ब्रेन रिसर्चके विद्वानोंके साथ मिलकर विशेषज्ञोंकी एक टीम बनायी। उन्होंने वेदपाठी विद्यार्थियोंपर प्रयोग किये और वे इस परिणामपर पहुँचे कि वैदिक मन्त्रोंके सस्वर उच्चारण एवं कण्ठस्थ करनेसे स्मरणशक्ति, विचारशीलता तथा ज्ञानका विकास होता है। उन्होंने इस शोधको संस्कृतका प्रभाव (The Sanskrit Effect) – की संज्ञा दी है और इसे साइंटिफिक अमेरिकन (Scientific American) नामक जर्नलने प्रकाशित किया है।

आजके वैज्ञानिकोंद्वारा किया हुआ यह अनुसन्धान हमारे प्राचीन ऋषियोंके आध्यात्मिक चिन्तन, अपरिमित ज्ञान एवं विज्ञानका परिचायक है। यह भारतीय संस्कृतिके लिये गर्व एवं गौरवका विषय है। धन्य हैं हमारे मन्त्रद्रष्टा ऋषि एवं उनका अक्षय ज्ञान।

—डॉ० रामानन्द तोषणीवाल

(३)

## माँकी निशानी

विजय अपने माता-पिताका ज्येष्ठ पुत्र था। उससे छोटे चार भाई थे। पिताका स्वर्गवास हो जानेके बाद परिवारका मुखिया विजय ही था। उसकी माँ अपने पाँचों पुत्रोंको पाँचों पाण्डवके समान समझती थी। सभी अपने परिश्रम और लगनसे सरकारी नौकरियोंमें लग गये थे। वे हर कार्यमें सक्षम थे। सम्पन्न थे। माँ विधवा होनेपर भी अपने पुत्रोंकी तरक्कीसे खुश थी। धीरे-धीरे माँकी उम्र भी अस्सी वर्षके ऊपर हो गयी थी। अक्सर माँ बीमार रहने लगी थी। वे डॉक्टरकी दवा और पथ्यके सहारे रहने लगी थीं।

एक दिन पाँचों पुत्र माँके पास पहुँचे। हाल-समाचार, सुख-दुःखके साथ पुरानी स्मृतियाँ दोहरायी जाने लगीं। इसी बीच चौथे नम्बरके पुत्र रामजीने माँसे कहा—‘माँ! आप अपनी ओरसे मुझे अपनी कोई स्मृति भेंटमें दे दें। वह यदि सोने-चाँदीका होगा तो मैं उसका मूल्य भी दूँगा, ताकि अन्य भाइयोंको बुरा न लगे।’ माँने ख़शी-ख़शी अपने गलेमेंका सोनेका चेन उतारकर

जब मैं रास्तेमें आ रहा था तो मेरी नजर दाबके पौधेपर पड़ी। मैं गाड़ीको किनारे लगाकर दाब तोड़नेके लिये उतर गया, किंतु जब दाब तोड़कर मैंने अपनी गाड़ीकी ओर दृष्टि दौड़ायी तो मेरे पाँवके नीचेसे धरती खिसक गयी। गाड़ी अपनी जगहपर न होकर धीरे-धीरे खिसकती हुई सड़कके दूसरे किनारेपर जा रही थी, और

सन्तकी प्रेरणासे राजाने प्रतिदिन रातके समय गरीबोंकी झोपड़ियोंमें जाना शुरू कर दिया। वे उन्हें अन्न, कपड़ा एवं अन्य सामग्री देने लगे। कुछ ही दिनोंमें राजाको पूर्ण मानसिक शान्तिकी अनुभूति होने लगी। एक दिन उन्हें लगा कि भगवान् सामने खड़े आशीर्वाद दे रहे हैं। राजा विष्णुश्रीने राजपाट पुत्रको सौंपकर साधु-वेश धारण कर लिया।—धर्मन्द्र गोयल





# गीता-दैनन्दिनी—गीता-प्रचारका एक साधन

(प्रकाशनका मुख्य उद्देश्य—नित्य गीता-पाठ एवं मनन करनेकी प्रेरणा देना।)

व्यापारिक संस्थान दीपावली/नववर्षमें इसे उपहारस्वरूप वितरित कर गीता-प्रचारमें सहयोग दे सकते हैं।

## गीता-दैनन्दिनी (सन् २०१९) अब उपलब्ध—मँगवानेमें शीघ्रता करें।

पूर्वकी भाँति सभी संस्करणोंमें सुन्दर बाइंडिंग तथा सम्पूर्ण गीताका मूल-पाठ, बहुरंगे उपासनायोग्य चित्र, प्रार्थना, कल्याणकारी लेख, वर्षभरके व्रत-त्योहार, विवाह-मुहूर्त, तिथि, वार, संक्षिप्त पञ्चाङ्ग, रूलदार पृष्ठ आदि।

**पुस्तकाकार—विशिष्ट संस्करण (कोड 1431)**—दैनिक पाठके लिये गीता-मूल, हिन्दी-अनुवाद मूल्य ₹ ८०

**सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 503)**—गीताके मूल श्लोक एवं सूक्तियाँ मूल्य ₹ ६५

**पॉकेट साइज—रंगीन सजिल्द आवरण (कोड 506)**—गीता-मूल श्लोक मूल्य ₹ ३५

बँगला (कोड 1489), ओड़िआ (कोड 1644), तेलुगु (कोड 1714) पुस्तकाकार—विशिष्ट संस्करण, अक्टूबर मासमें उपलब्ध सम्भावित प्रत्येकका मूल्य ₹ ८०

## नवीन प्रकाशन-छपकर तैयार

## श्रीमद्भागवतमहापुराण (श्रीधरीटीका एवं गुजराती व्याख्या)-के विभिन्न खण्डोंका विवरण

कोड	विवरण	मूल्य ₹	कोड	विवरण	मूल्य ₹
2156	श्रीमद्भागवतमाहात्म्य, प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्कन्ध खण्ड १	३५०	2158	सप्तम, अष्टम एवं नवम स्कन्ध खण्ड ३	३५०
2157	चतुर्थ, पञ्चम एवं षष्ठ स्कन्ध खण्ड २	३५०	2159	दशम स्कन्ध [पूर्वार्ध एवं उत्तरार्ध] खण्ड ४	३५०
			2160	एकादश, द्वादश स्कन्ध एवं श्लोकानुक्रमणिका खण्ड ५	३५०

**श्रीभक्तमाल (कोड 2161) गुजराती, ग्रन्थाकार**—भक्तमाल परमभागवत श्रीनाभादासजी महाराजकी काव्यमयी रचना है। इसमें चारों युगों, विशेषकर कलियुगके भक्तोंका बड़े ही रोचक ढंगसे वर्णन हुआ है। मूल्य ₹ २६० (कोड 2066) हिन्दीमें मूल्य ₹ २३० भी उपलब्ध।

**सरल गीता (कोड 2149) मराठी, श्लोकार्थसहित, [पुस्तकाकार]**—प्रस्तुत पुस्तकको गीताजीका सही उच्चारण सीखनेवाले सामान्य पाठकोंकी सुविधाके लिये प्रत्येक चरणके कठिन शब्दोंको सामासिक चिह्नोंसे अलग करके दो रंगोंमें छापा गया है। इससे श्लोकके प्रत्येक चरणको समझनेमें सहायता मिलेगी। (कोड 2099) हिन्दी, (कोड 2136) ओड़िआ, (कोड 2163) नेपाली। प्रत्येकका मूल्य ₹ ३५, (कोड 2152) अंग्रेजी सजिल्द। मूल्य ₹ ६०

**अब उपलब्ध—संत-अङ्क (कोड 627) ग्रन्थाकार**—इसमें उच्चकोटिके अनेक संतों—प्राचीन, अर्वाचीन, मध्ययुगीन एवं कुछ विदेशी भगवद्विश्वासी महापुरुषों तथा त्यागी-वैरागी महात्माओंके ऐसे आदर्श जीवन-चरित्र हैं, जो पारमार्थिक गतिविधियों, सार्वभौमिक सिद्धान्तों, त्याग-वैराग्यपूर्ण तपस्वी जीवन-शैलीको उजागर करके आदर्श जीवन-मूल्योंको रेखाङ्कित करते हैं। मूल्य ₹ २६०

**गीताभवन आयुर्वेद संस्थान** पो० स्वर्गाश्रमद्वारा गंगाजलसे निर्मित ओषधियाँ गीताप्रेस, गोरखपुरकी अनेक शाखाओंमें एवं अनेक स्टेशन-स्टालोंपर भिन्न-भिन्न परिमाणमें उपलब्ध हैं।

**पो०—स्वर्गाश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड), पिन 249304; फोन नं० 0135-2440054**

**खुल गया है—** ग्वालियर [मध्यप्रदेश] रेलवे स्टेशन प्लेटफार्म नं० 1 पर गीताप्रेस, गोरखपुरका पुस्तक-स्टाल



**COLLECTION OF VARIOUS**  
**-> HINDUISM SCRIPTURES**  
**-> HINDU COMICS**  
**-> AYURVEDA**  
**-> MAGZINES**

**FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)**

**Made with**  
  
**By**  
**Avinash/Shashi**

**Icreator of**  
**hinduism**  
**server!**



## जनवरी सन् २०१९ ( कल्याण-वर्ष ९३ )-का विशेषाङ्क ' श्रीराधामाधव-अङ्क '

सच्चिन्मयी जगदम्बा श्रीराधा सच्चिदानन्दधन परमात्मप्रभु श्रीमाधवकी चिद्विलासरूपा आह्लादिनी शक्ति हैं। श्रीराधारानी श्रीकृष्णकी जीवनरूपा हैं और श्रीकृष्ण ही श्रीराधाके जीवन हैं। श्रीराधारानी महाभावस्वरूपा हैं और प्रियतम श्रीकृष्णको आह्लाद प्रदान करती रहती हैं। उपासना-जगत्में भक्तोंकी अभिलाषापूर्तिके लिये श्रीराधामाधवका युगल अवतरण हुआ है। भगवान् श्रीकृष्ण ही अपने नित्य सौन्दर्य-माधुर्य-रसका समास्वादन करनेके लिये स्वयं अपनी ह्लादिनीशक्तिको श्रीराधास्वरूपमें अभिव्यक्त किये हुए हैं।

सुहृद् पाठकों—श्रद्धालु भक्तोंको श्रीराधामाधवकी मधुरातिमधुर लीलाओंका दर्शन करानेहेतु परमात्मप्रभुकी कृपासे इस बार विशेषाङ्क रूपमें [जनवरी २०१९ में] ' श्रीराधामाधव-अङ्क ' प्रकाशित करनेका निर्णय लिया गया है। इसमें मुख्य रूपसे राधामाधव-तत्त्वविचार, राधामाधवकी उपासनाके विविध रूप, भक्तिजगत्के श्रीसर्वस्व राधामाधव, श्यामसुन्दर एवं राधारानीकी अन्तरंग तथा बाह्यलीला, लीलाके सहचर, वृन्दावन एवं मथुराधाम तथा राधामाधवके भक्तवृन्दोंकी रोचक, कलात्मक, लीलात्मक एवं भक्तिरसकी सामग्रीकी प्राथमिकता रहेगी जो आत्मकल्याणकारी साधकों तथा आस्तिकजनों—सभीके लिये परम मंगलमय एवं हितकारी होगी।

वार्षिक शुल्क ₹ २५०, पञ्चवर्षीय शुल्क ₹ १२५०

✧ अवधि-जनवरीसे दिसम्बर ✧

अब 'कल्याण'के मासिक अङ्क [Kalyan-gitapress.org](http://Kalyan-gitapress.org) पर निःशुल्क पढ़ें।

## कल्याणके पाठकोंसे नम्र निवेदन

कल्याणके मासिक अङ्क आपको निश्चित मिले इसके लिये आपका मोबाइल नम्बर हमारे पास होना आवश्यक है। कृपया अपना मोबाइल नं० ग्राहक संख्याके साथ हमें मो० नं० 9648916010 अथवा 6306193176 पर WhatsApp अथवा SMS द्वारा अवश्य सूचित करें। जिससे आपको डिस्पैचके साथ ही SMS द्वारा सूचना दी जा सके और आप पोस्टमैनसे जानकारी करके अङ्क प्राप्त कर सकें।

## आवश्यक सूचना

पिछले कुछ समयसे हमें इस प्रकारकी सूचनाएँ प्राप्त हो रही हैं कि गीताप्रेसकी पुस्तकोंको बेचनेवाले कुछ विक्रेता गीताप्रेस प्रकाशनोंके साथ-साथ अपनी दूकान, स्टॉल या प्रचार-वाहनपर गीताप्रेसकी नकली पुस्तकें तथा विभिन्न प्रकारकी वस्तुएँ—जैसे तुलसी एवं रुद्राक्षकी माला, अँगूठी, शंख तथा धूप आदि भी बेचते हैं और उसे गीताप्रेसकी बताकर ग्राहकोंको भ्रमित करते हैं।

हम अपने सभी प्रेमी-श्रद्धालु पाठकोंको सावधान करना चाहते हैं कि वे इस प्रकारके किसी भी झूठे दावेसे भ्रमित होकर ठगे न जायँ; क्योंकि गीताप्रेस अपने प्रकाशनके अतिरिक्त किसी भी प्रकारकी पूजा-सामग्री न तो स्वयं बनाता है और न उसे प्रचारित करता है। गीताप्रेसद्वारा अपना कोई प्रचार-वाहन भी नहीं चलाया जा रहा है। अतः विशेष सावधान रहना चाहिये।